पवन ऊर्जा

लोकोपयोगी विज्ञान

पवन ऊर्जा

सुनील बी. आठवले

अनुवाद

विजय सिंह

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

यह पुस्तक पुनर्निर्मित पर्यावरण-मित्र कागज पर मुद्रित है।

मुखचित्र : कन्याकुमारी से लगभग 10 कि.मी. की दूरी पर स्थित पवन चक्कियां। अविनाश पसरीचा (स्पैन पत्रिका), द्वारा खींची गयी ट्रांसप्रेंसी।

ISBN 81-237-1675-3

पहला संस्करण : 1996 (*शक* 1917)

Wind Energy (*Hindi*)

रु. 27.00

**निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, ए-5 ग्रीन पार्क,
नयी दिल्ली-110016 द्वारा प्रकाशित**

विषय-सूची

यह पुस्तक मेरे माता-पिता

श्रीमती रोहिणी बी. आठवले *एवं* डा. बी. डबल्यू. आठवले

को समर्पित है

आभार

लेखक निम्नलिखित व्यक्तियों/संस्थाओं/संस्थानों/उत्पादकों का इस पुस्तक के लिए प्रदान किए गये विभिन्न तकनीकी आंकड़ों, मार्गदर्शन और बहुमूल्य सहयोग के लिए आभार व्यक्त करते हैं:

आडलेर विंडटेकनिक जीएमबीएच, जर्मनी; अमेरिकन विंड एनर्जी एसोसियेशन, वाशिंगटन डी.सी; एसोसियेशन आफ डेनिश विंडमिल मैन्युफैक्चरर्स, हेरनिंग, डेनमार्क; अम्बेसाद वान बेल्जी, बेल्जियम एम्बेसी; ब्रिटिश विंड एनर्जी ऐसोसियेशन, लन्दन; सेडस्ट (CEDUST) फ्रेन्च एम्बेसी; कैनेडियन हाई कमीशन, नयी दिल्ली; डेनिश मिनिस्ट्री आफ एनर्जी, डेनमार्क; गैर-पारंपरिक ऊर्जा स्रोत विभाग, भारत सरकार; डेनिश एनर्जी एजेन्सी, कोपेनहेगेन, डेनमार्क; डेनिश टेक्नोलाजिकल इंस्टीट्यूट, टास्ट्रप, डेनमार्क; डी.ओ.ई. टेक्नीकल इन्फारमेशन सेन्टर, यू एस ए; डा. ए.वी. सप्रे, वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी प्रकोष्ठ, महाराष्ट्र शासन; ग्रुंडफास इंटरनेशनल ए/एस, डेनमार्क; एनर्जी टेक्नोलाजिकल सपोर्ट यूनिट, यूनाइटेड किंगडम; एम्बाजादो दि मैक्सिको, नयी दिल्ली; नेशनल विंड टबाईन सेंटर, स्काटलैंड; नासा लुइस रिसर्च सेन्टर, ओहियो, यू एस ए; एन. एस. काले, ए/पी, मुरूम डिस्ट्रिक्ट, उस्मानाबाद; आर.आई.एस. (रिस) नेशनल लेबोरेटरी, डेनमार्क; रिन्यूएबल एनर्जी इनफोरमेशन सर्विस; डेनमार्क, रिन्यूएबल एनर्जी ब्यूरो, यूनाइटिड किंगडम; रॉयल नार्वेजियन एम्बेसी, नयी दिल्ली, सेरी विंड प्रोग्राम, बोलिवार्ड, यू.एस.ए.; वालैंटियर्स इन टेक्निकल एसिस्टेंस, वर्जीनिया, यू.एस.ए.; वेस्टास-डेनिश विंड टेक्नालाजी ए/एस लेम, डेनमार्क; यूनाइटेड स्टेट्स डिपार्टमेंट आफ एनर्जी, टेनेसी, यू.एस.ए.; विंडपावर मंथली, डेनमार्क; नार्डटैंक एनर्जी ग्रुप, डेनमार्क, और स्पैन पत्रिका, यू.एस.आई.एस, नयी दिल्ली।

प्राक्कथन

सन् 1986 में, महाराष्ट्र राज्य विद्युत बोर्ड तथा भारत के गैर-पारम्परिक ऊर्जा संसाधन विभाग के संयुक्त एवं समन्वित प्रयासों के परिणामस्वरूप पवन ऊर्जा द्वारा विद्युत उत्पादन के लिए आदर्श स्थान के रूप में चयन किये गये एक छोटे से ग्रामीण कस्बे, देवगढ़ में, महाराष्ट्र का प्रथम टर्बानल संयंत्र लगाया गया था। यह टर्बाइन संयंत्र सागर तट के निकट स्थित है तथा यहां पर्याप्त औसत पवन वेग उपलब्ध है। जब मैंने इस परियोजना का अध्ययन किया तो मैं पवन ऊर्जा के इतने रचनात्मक उपयोगों को देखकर सम्मोहित हो गया। अतः पवन ऊर्जा में मेरी रुचि जागृत कराने के लिए मैं महाराष्ट्र सरकार तथा भारत सरकार का आभारी हूं।

मेरी इस उत्सुकता ने मुझे इस पूरी परियोजना के गहन अध्ययन तथा प्रारंभ से अंत तक इसके सतत पर्यवेक्षण के लिए प्रेरित किया। इस अध्ययन एवं पर्यवेक्षण की अवधि में मुझे कुछ मूलभूत कठिनाइयों व समस्याओं का सामना करना पड़ा, जिन्हें सुलझाने में इस क्षेत्र के विशेषज्ञ तथा इस परियोजना के प्रभारी श्री नीलकंठ जीवणे ने स्वेच्छा से तत्काल मेरी सहायता की। मैंने देवगढ़ पवन ऊर्जा-फार्म के विवरण को भली प्रकार समझा परंतु मेरी अतृप्त उत्सुकता ने मुझे इस विधा के गहन व सघन अध्ययन के लिये विवश कर दिया कि मैं देवगढ़ परियोजना के तकनीकी पहलुओं के अध्ययन के अतिरिक्त, पवन-चक्की के इतिहास, उसके क्रमविकास (इवोल्यूशन), रचना संबंधी परिवर्तनों तथा उसके मूल सिद्धांतों आदि के संबंध में जानकारी प्राप्त करूं। देवगढ़ एक छोटा-सा ग्रामीण कस्बा होने के कारण मुझे वांछित आवश्यक आंकड़े उपलब्ध कराने की स्थिति में नहीं था। इस समस्या से उबरने के लिए मैंने विभिन्न दूतावासों, पुस्तकालयों, तथा भारत व विदेशों की विभिन्न संस्थाओं को आंकड़ों व उनकी उपलब्धता की जानकारी के लिए पत्र लिखे। अनेकों क्षेत्रों से, विशेष रूप से विदेशी व्यक्तियों और संस्थानों से, जो मुझे हर प्रकार की अपेक्षित सहायता देने को सहर्ष तत्पर थे, मिली सकारात्मक प्रतिक्रिया से मैं आश्चर्यचकित रह गया। परंतु मुझे भारतीय प्रतिक्रिया से अत्यंत आघात पहुंचा, जिनके अस्पष्ट उत्तरों ने मुझे यह सोचने पर विवश कर दिया कि क्या यह जानकारी उनके पास उपलब्ध है, या यहां भारत में हम,

उपलब्ध जानकारी को आपस में बांटना नहीं चाहते हैं? खैर, इसके चाहे जो भी कारण रहे हों, इससे मेरे इस विश्वास की पुष्टि हो गयी कि यदि कोई आम आदमी पवन ऊर्जा के विभिन्न पहलुओं की जानकारी प्राप्त करना चाहे तो यह उसके लिए बहुत कठिन होगा।

तब मैंने पवन ऊर्जा के विभिन्न महत्वपूर्ण पहलुओं पर कुछ आधारभूत जानकारी जुटाने के उद्देश्य से एक पुस्तक लिखने का निर्णय लिया। इसके प्रथम चरण के रूप में, मैंने पवन ऊर्जा के इतिहास, आधारभूत सिद्धांतों, उपयोग तथा इस क्षेत्र में भावी विकास से संबंधित लेखों की एक शृंखला लिखी तथा सन् 1987-88 में, मराठी विज्ञान पत्रिका 'ज्ञान विकास' में उनका प्रकाशन हुआ। संभवतया अपने पेशे की प्रकृति के कारण या अपनी अन्य व्यस्तताओं या फिर कुछेक अन्य कारणों से, जिन्हें मैं स्वयं भी ठीक से स्पष्ट नहीं कर पाऊंगा, ये सभी लेख इसके पश्चात् काफी लंबे समय तक यों ही रखे रहे। फिर प्रारंभ हुआ खाड़ी युद्ध, और इसके लिए इराकी राष्ट्रपति श्री सद्दाम हुसैन को धन्यवाद देने से मैं अपने आपको रोक नहीं पा रहा हूं, क्योंकि ये वही थे जिन्होंने विश्व को सतर्क होकर बैठने और यह सोचने के लिए विवश कर दिया कि जीवाश्मीय ईंधन सीमित है तथा उस पर प्रतिबंध लगाया जा सकता है, कि विश्व के अनेकों विकसित और विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था तेल पर प्रतिबंध लगाये जाने से धराशाही हो जायेगी, कि राष्ट्रों को ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों को खोजना पड़ेगा, तथा गैर-पारम्परिक नवीकृत होते ऊर्जा स्रोतों का विकास करना होगा। युद्ध ने लोगों को इस समस्या की गंभीरता पर विचार करने हेतु बाध्य कर दिया और उन सब में से मैं भी एक था। इस स्थिति में मैंने अपने कागजों की खोजबीन की, आंकड़ों को विश्लेषित किया तथा अपनी जानकारी को पूर्णता प्रदान करने के लिए अतिरिक्त जानकारी जुटाई। जिन आंकड़ों की खोज में मैं था, उन्हें जुटाने में मैं शीघ्र ही सफल हो गया।

संभवतया आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि यह क्षेत्र विशेष मेरे पेशे से बिल्कुल अलग है। पेशे से मैं एक चिकित्सक हूं, परंतु फिर भी विज्ञान और वैज्ञानिक जानकारी मेरी रुचि के विशिष्ट क्षेत्र रहे हैं। हालांकि विभिन्न विषयों पर मेरे अनेकों लेख प्रसिद्ध पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं, फिर भी इस प्रकार का कार्य अर्थात् आधारभूत वैज्ञानिक जानकारी का एकत्रीकरण तथा इस जानकारी का आम आदमी के लिए प्रस्तुतीकरण का कार्य मेरे लिए पूर्णतया नया था। इस क्षेत्र में पदार्पण का विचार भी मैंने पहले कभी नहीं किया था।

कार्य को पूर्ण करने की अवधि में पांडुलिपि के लिए चित्र के बनाने की समस्या उपस्थित हुई क्योंकि पवन चक्कियों के समुचित एवं भली प्रकार चित्र बनाने के लिए 200 कि.मी. के पूरे क्षेत्र में एक भी कलाकार उपलब्ध नहीं था। मेरी पत्नी डा. मंजूषा

ने प्रकाशक के प्रयोगार्थ कुछ रेखाचित्र बनाकर मेरी समस्या का निराकरण किया। कार्य पूर्ण करने के पश्चात मैंने अपने मित्र प्रो. महेश बेलेकर (गोगेट कालेज, रत्नागिरी) से पुस्तक को पढ़ने व देखने का अनुरोध किया। उन्होंने बिना किसी दुविधा के पुस्तक को देखा व उसकी कमियों को दूर करने संबंधी अपने सुझाव दिये। मेरे मित्र नीलकंठ जीवणे ने भी इस पुस्तक को बहुत ही सूक्ष्म दृष्टि से देखा, तथा उन दोनों, अर्थात् जीवणे और बेलेकर ने ही पांडुलिपि को अंतिम रूप दिया है।

भूतकाल में काफी समय तक पवन ऊर्जा एक नवीन तथा कार्य हेतु अपरम्परागत क्षेत्र माना जाता था। परंतु अब समय आ गया है कि पवन से ऊर्जा प्राप्त करने की प्रक्रिया, तथा ऊर्जा की कमी को दूर करने के लिए आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद व प्रभावी ऊर्जा प्राप्ति एक स्वप्न नहीं, बल्कि वास्तव में एक सत्य, एक वास्तविकता बन चुकी है।

●

1

पवन शक्ति का इतिहास

सूर्य प्रति सैकेंड पचास लाख टन पदार्थ को ऊर्जा में परिवर्तित करता है। इस ऊर्जा का जो थोड़ा सा अंश पृथ्वी पर पहुंचता है,वह यहां कई रूपों में प्राप्त होता है। इसमें से पवन ऊर्जा भी एक है। पवन शक्ति का आशय है वायु से गतिज ऊर्जा को लेकर उसे उपयोगी यांत्रिकी अथवा विद्युत ऊर्जा के रूप में परिवर्तित करना। पवन शक्ति का उपयोग उतना ही प्राचीन है जितना कि अभिलिखित इतिहास। पवन ऊर्जा के उपयोग की अवधारणा का विकास ई. पू. 4000 तक पुराना है, जब प्राचीन मिस्र निवासी नील नदी में अपनी नावों को चलाने के लिए पाल का प्रयोग करते थे (चित्र-1)। पवन चक्कियों तथा पनचक्कियों ने सबसे पहले शक्ति के स्त्रोत के रूप में पशु शक्ति
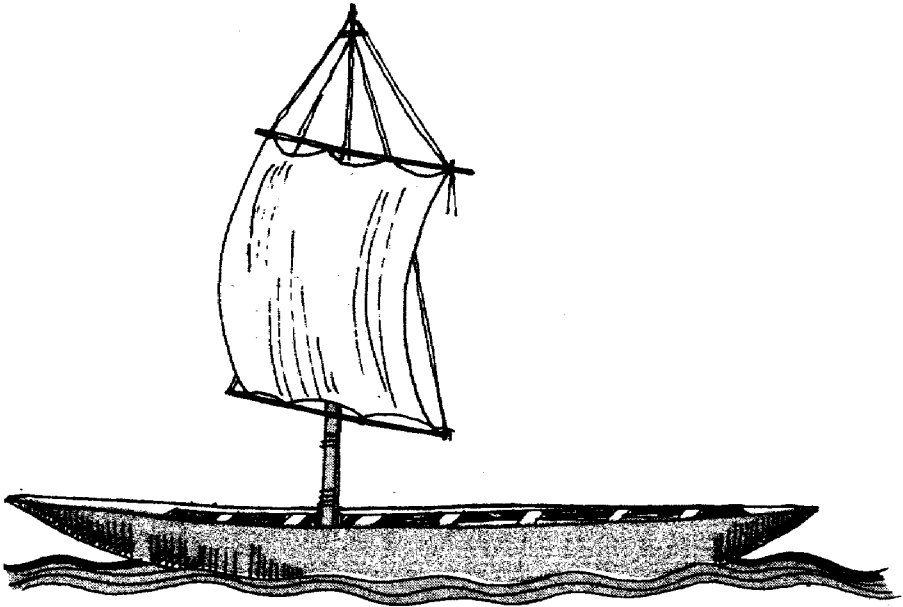
चित्र 1. नील नदी में पाल वाली एक नौका।

का स्थान लिया। 7 वीं शताब्दी के अरब लेखकों ने ई. 644 में फारस में मिलों का संदर्भ दिया है। ये मिलें साइस्तां में स्थित थीं, जो फारस (ईरान) व अफगानिस्तान की सीमा पर है। पीसने वाले पत्थरों को शक्ति प्रदान करने के लिए प्रयोग की जाने वाली ये पवन चक्कियां पश्चिम में प्रचलित क्षैतिज चक्कियों से भिन्न थीं। ये प्रारंभिक ऊर्ध्व-अक्षीय पवन चक्कियां (पेनमोन) एक स्थिर भवन में रहती थीं तथा केवल एक जोड़ी पत्थरों को बिना किसी गियर प्रणाली के सीधे ही शक्ति प्रदान करती थीं। ये खुली छतों वाले भवनों में एक पंक्ति में रहती थीं जिनमें वायु के आवागमन के लिए विकर्णतः एक दूसरे के सम्मुख झरोखे बने होते थे जो कि पूरे भवन में ऊपर से नीचे तक होते थे। क्षैतिज मिलों का उपयोग तिब्बत में प्रार्थना चक्रों को घुमाने तथा चीन में सिंचाई हेतु पानी ऊपर लाने व नमक बनाने के लिये सागर जल को ऊपर उठाने के लिए किया जाता था। चंगेज खान (ई. 1167-1227) ने चीन में सर्वप्रथम पवन चक्की को प्रारंभ किया। उसने कुछ निपुण ईरानी कारीगरों व तकनीशियनों को पकड़ा और उन्हें बंदी बनाकर चीन ले गया। उनके मार्गदर्शन में उसने पवन ऊर्जा को उपयोग में लाकर आधुनिक सिंचाई प्रणाली का विकास किया। उस समय की आवश्यकता को पूरा करने में वह डिजाइन भली-भांति सक्षम था। चीन के लोगों ने इस आविष्कार को स्वीकार किया तथा जल्दी ही चीन में पवन चक्कियां काफी लोकप्रिय हो गयीं।

इग्लैंड और फ्रांस में पवन चक्कियों के प्रारंभ के संबंध में कई सिद्धांत बताये जाते हैं, जिसमें से सबसे अधिक स्वीकृत यह है कि धर्म-योद्धाओं (क्रूसेडर्स) ने इन्हें सर्वप्रथम निकट-पूर्व देशों में देखा और वे इस जानकारी को अपने साथ वापस लाये। पवन चक्कियों के संबंध में सबसे पहला, प्रामाणिक संदर्भ सन् 1180 में नार्मंडी तथा प्रोवेन्स में, और फिर यॉर्कशायर तथा सफॉक में क्रमशः सन् 1185 तथा 1187 में मिलता है। ये सब लगभग उसी प्रकार के ऊर्ध्व पालों वाली चक्कियां ही थीं।

पवन ऊर्जा प्राप्त करने का यह विचार और प्रौद्योगिकी अरबों के माध्यम से पश्चिमी यूरोप में पहुंची। यूरोपीय चक्कियां स्तंभनुमा थीं। पूरी मशीन एक स्तंभ (लकड़ी के एक बक्से के समान संरचना, जिसमें चक्की के पत्थर और अन्य यंत्र लगे होते थे) पर बनी रहती थी। पंख इसी स्तंभ पर लगे होते थे, जो भूमि पर बना होता था। यह एक धुरी का काम करता था जो वायु में घूमकर चक्की को घुमाता जाता था (चित्र-2)। इस प्रकार की पवन चक्कियों में विशेष दोष-सुरक्षा यंत्र अर्थात् यांत्रिक ब्रेक (मैकेनिकल ब्रेक) लगे रहते थे। इनमें से कुछेक स्तंभ पवन चक्कियां धंसे हुए स्तंभ वाली थीं जिनके स्तंभ और सहारा देने वाले खंभे जमीन में धंसे होते थे। इस प्रकार की स्तंभ पवन

चक्कियां पहली बार फ्रांस में सन् 1180 में, सीरिया में 1190 तथा इग्लैंड में 1191 में दिखाई दीं (चित्र-3)।

स्तंभ दो आड़े खंभों पर टिका होता है, (1) जिनके दोनों सिरे ईंट-पत्थर आदि से निर्मित खंभों पर टिके होते हैं। (2) चक्की का भार इन खंभों पर चार विकर्णीय
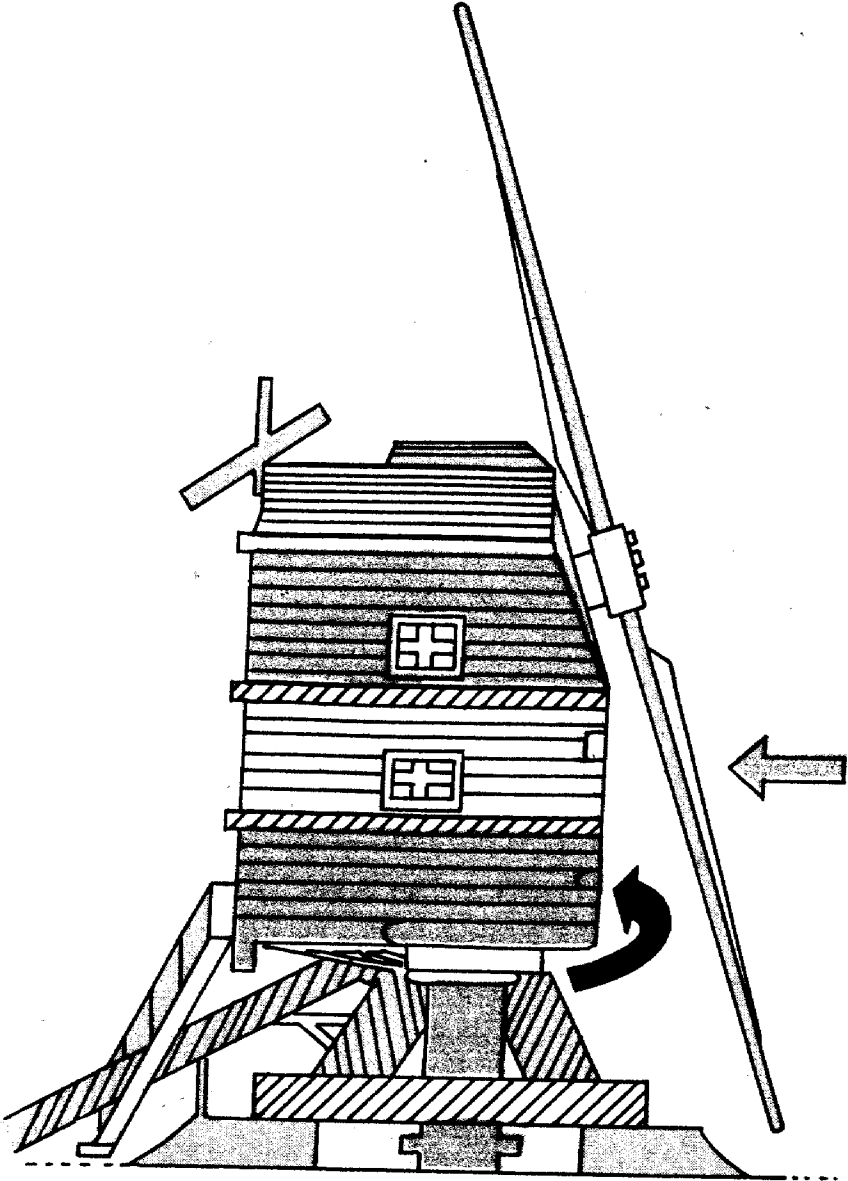
चित्र 2. यूरोप में एक स्तंभ चक्की।
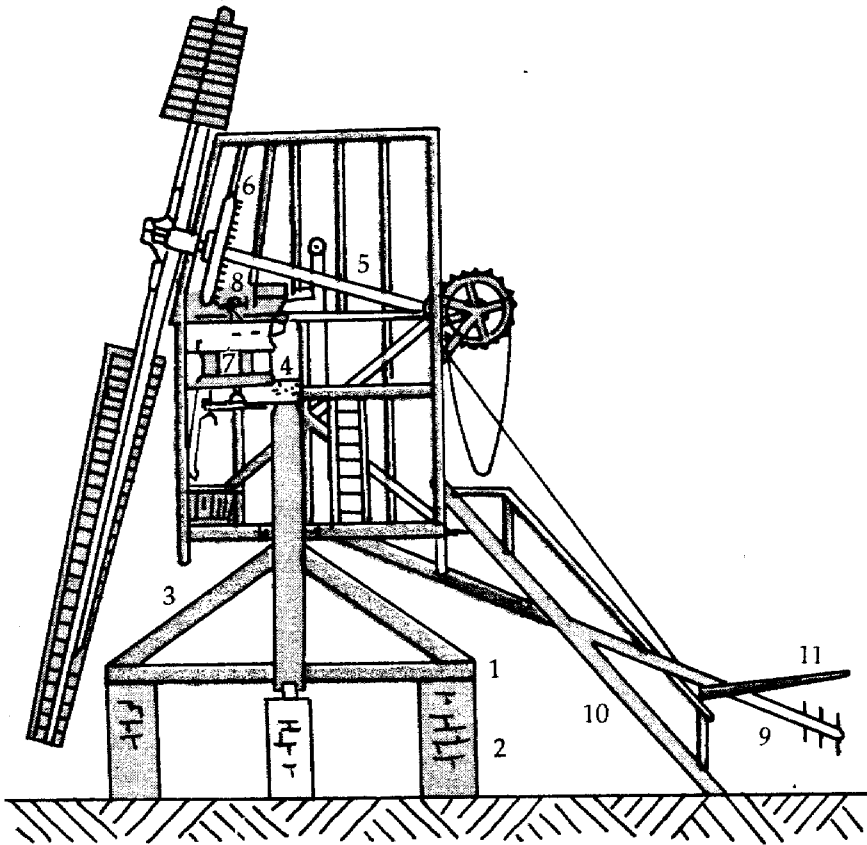
चित्र 3. स्तंभ चक्की 1. क्रास ट्री, 2. स्तंभ, 3. क्वार्टर बार्स, 4. क्राउन ट्री, 5. पवन दंड, 6. ब्रेक पहिया, 7. पत्थर, 8. वालोवर, 9. पुच्छ स्तंभ 10. सीढ़ी, 11. लीवर

स्ट्रटों अथवा क्वार्टर बारों (3) द्वारा विभाजित हो जाता है। ये क्वार्टर बारें स्तंभ में जड़ी होती हैं तथा इन्हें फिसलने से रोकने के लिए एक 'पक्षी मुख जोड़' होता है और ये क्वार्टर बारें आड़े खंभों पर सधी होती हैं। यह पूरी अधोरचना अधिकांशतः एक गोल, बेलनाकार घरनुमा बनावट में बंद रहती है जो कि इसकी सुरक्षा करती है तथा साथ ही भंडारघर का कार्य भी करती है। यह स्तंभ चक्की के शरीर के निचले भाग में फर्श से निकलकर क्षैतिज बीम (जो कि क्राउन ट्री (4) कहलाता है) में जुड़ जाता है : चक्की का पूरा आकार, जिसमें पत्थर तथा मशीनरी आदि सम्मिलित हैं, इसी के ऊपर बनता है।

पाल या पंख वायुदंड (विंड शैफ्ट) (5) पर लगे होते हैं तथा वे क्षैतिज 5^0 से 15^0

के कोण तक झुके हुए रहते हैं ताकि पालों या पखों के सिरे मिल के निचले भाग से बिना टकराये साफ घूम सकें। वायुदंड पर, चक्की के अंदर एक रोक-चक्र या ब्रेक वील (6) लगा होता है, जिस पर एक संकुचनकारी रोक, इस चक्की को रोकने का कार्य करती हैं। इस चक्के में दांते होते हैं और चालन इसी से होता है। कभी-कभी तो पत्थर (7) सीधे ही वालोवर (8) (मिल का प्रथम घूमने वाला पहिया) द्वारा घुमाये जाते हैं और कभी-कभी अप्रत्यक्ष रूप से गियर स्पर चक्र तथा स्पर पिनियनों द्वारा घुमाये जाते हैं जिन्हें स्टोन नट कहा जाता है। यहां एक दूसरा चक्का भी होता है, जो कि ब्रेक चक्के की तरह होता है लेकिन उससे छोटा होता है। यह वायुदंड के काफी पीछे स्थित होता है तथा यह चक्की के पिछले भाग में स्थित अतिरिक्त पत्थरों को घुमाता है।

पीसे जाने वाले अनाज को सबसे पहले चक्की के ऊपरी सिरे पर बोरा उठाने वाले यंत्र (सैक ह्वायस्ट) द्वारा ले जाया जाता है, जिसे चलाने की शक्ति या तो ब्रेक चक्र से गियर लगाकर या वायुदंड से पट्टे द्वारा या किसी भी अन्य प्रकार प्राप्त होती है। अधिकांशतया सर्पण पट्टी के सिद्धांत को ही इस चालन में प्रयोग में लाया जाता है जो कि पट्टे के कसने के साथ ही क्रियाशील हो जाता है। स्तंभ मिल को फिर पुच्छ स्तंभ (9) के द्वारा वायु की दिशा में लाया जाता है। सामान्यतया मिल के पीछे की ओर लगी हुई वह सीढ़ी (10), जिससे मिल में पहुंचा जा सकता है, जमीन पर टिकी हुई होती है। मिल के काम करने की स्थिति में यह पिछले टेक (बैक स्टे) का कार्य करती है। चक्की के घूमने के पहले इस सीढ़ी को एक लीवर (11) की सहायता से पृथ्वी से ऊपर उठा दिया जाता है और फिर पुच्छ स्तंभ पर बल लगाकर चक्की को घुमाया जाता है।

हालांकि यह स्तंभ चक्की इग्लैंड में काफी लोकप्रिय हुई थी, परंतु इसकी बनावट कमजोर थी क्योकि यह वायु वेग से उलट सकती थी, अथवा सड़न व लापरवाही के कारण, मरम्मत न किये जा सकने की स्थिति तक क्षतिग्रस्त हो सकती थी। अधोसंरचना व क्वार्टर बारों को सड़ने से बचाने के लिए साधारणतया स्थिर आधार संरचना के चारों ओर ईंटों का एक गोल घर बना दिया जाता था। चक्की स्वयं मुख्य स्तंभ पर चारों ओर घूमती थी तथा गोल घर का उपयोग भंडारगृह के रूप में किया जाता था। जो स्तंभ चक्कियां अभी भी जीवित हैं उन्हें बहुत सावधानीपूर्वक, काफी बड़ी धनराशि व्यय करके, परिरक्षित किया गया है। लेकिन दक्षिणी तथा पूर्वी इग्लैंड में ऐसे अनेक पवन चक्की टावर हैं जिनमें मशीनें अब नहीं रह गयी हैं और वे टावर अब आवास में परिवर्तित हो चुके हैं।

मीनार चक्की या टावर मिल (चित्र-4) फ्रांस में 14 वीं शताब्दी के प्रारंभ में विकसित की गयी थी। इसके पाट तथा गियर आदि ईंटों की बनी एक स्थिर मीनार में स्थित थे व ऊपरी हिस्सा (कैप) घूमने वाला था। उसमें पाल आदि लगे थे और उसे एक ट्रैक या कर्ब पर जो कि मीनार के ऊपरी सिरे पर स्थित था, घुमाया जा सकता था। इस ऊपरी सिरे को वायु की दिशा में घुमाया जा सकता था (चित्र-5)। इस प्रकार की

चित्र 4. घूमने वाली ऊपरी कैप सहित एक मीनार चक्की। यह पहियों पर घूमती है, और पंख-पुच्छ की सहायता से पवन की दिशा में रहती है।
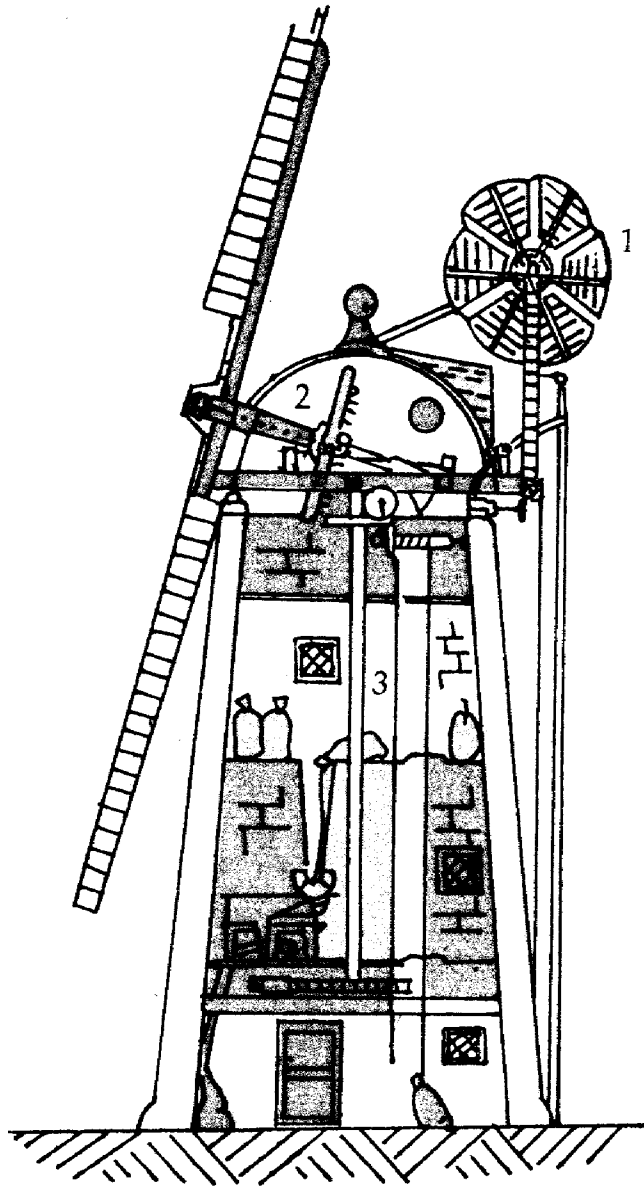
चित्र 5. एक मीनार चक्की और उसके भीतरी भाग। देखिए : पंख-पुच्छ-1, कैप-2 व सीधा खड़ा दंड (शैफ्ट)-3

चक्की में थोड़ा सा संशोधन इग्लैंड में स्मॉक मिल के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इन मिलों में अष्टभुजाकार, ऊपर को संकरी लकड़ी की मीनारें (चित्र-6) हुआ करती थीं। मीनार चक्की का सर्वप्रथम उल्लेख सन् 1420 के आसपास छपे एक फ्रांसीसी सॉल्टर (भजनगीत) में मिलता है। दोनों ही प्रकार की पवन चक्कियों का उपयोग पूरे यूरोप
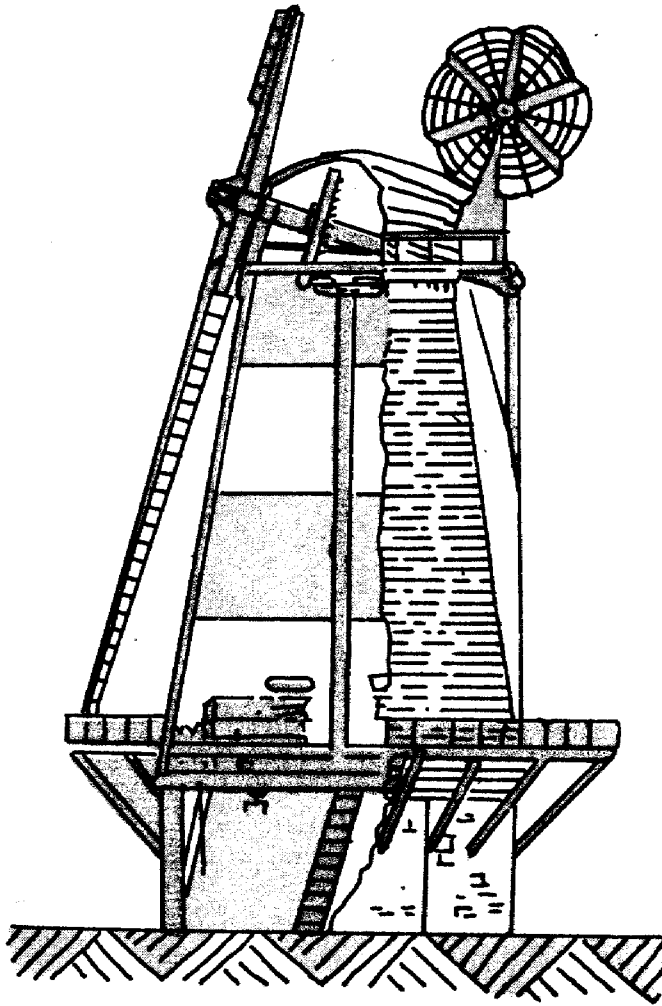
चित्र 6. इंग्लैंड स्थित एक स्मॉक चक्की, नियंत्रकों सहित।

में हो रहा था तथा उनमें से कुछ तो अभी तक अच्छी परिरक्षित दशा में मौजूद हैं। ब्रिटिश, फ्रांसीसी तथा डच अधिवासियों ने अपने विचारों व प्रौद्योगिकी को शीघ्र ही अमेरिका तथा विभिन्न उपनिवेशों तक पहुंचा दिया।

15वीं शताब्दी के प्रारंभ में, डचों ने पवन चक्की के पुनर्अभिकल्पन (रिडिजाइनिंग) में बाजी मार ली। उन्होंने एक अधिक उन्नत, अधिक खोखले स्तंभों वाली चक्की (चित्र-7) का निर्माण किया, ताकि उसकी सहायता से झीलों और दलदलों का पानी निकाला जा सके। इस चक्की में एक सीधा खड़ा दंड होता है जिसमें ऊपर व नीचे द्वि-गियरों की व्यवस्था होती है। यह दंड खोखले स्तंभ में से गुजरता है तथा जहाज के पैडल की तरह उस स्कूप पहिये को घुमाता है जो कि पानी को निचली सतह से
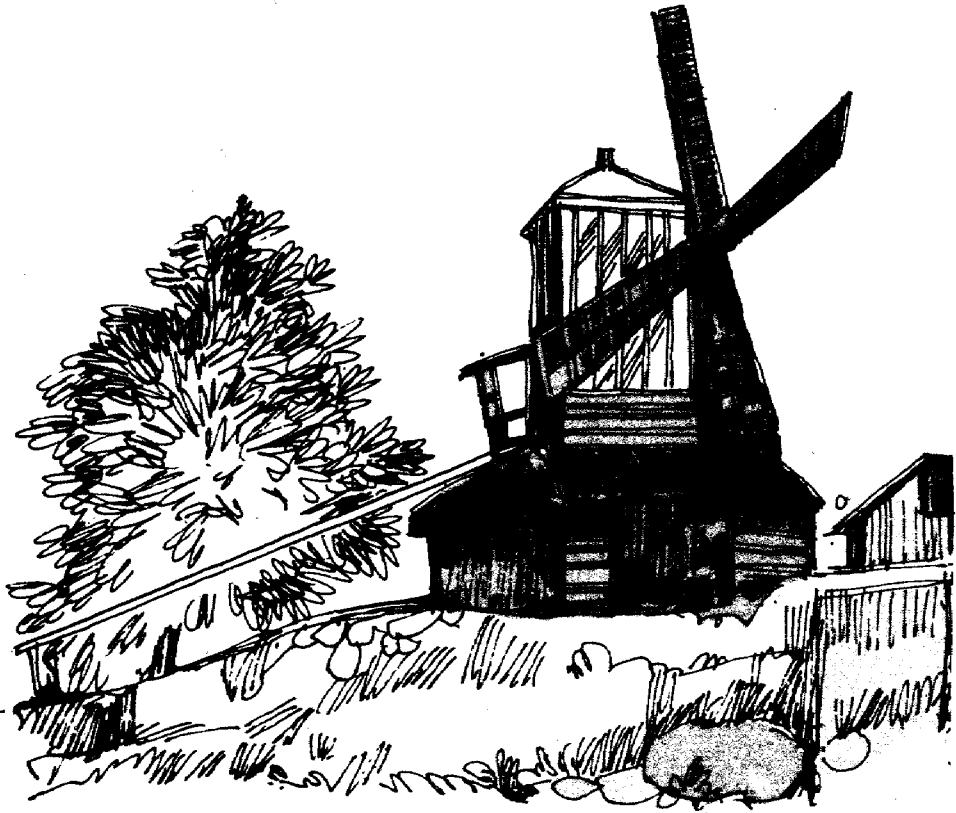
चित्र 7. फिनलैंड की एक खोखले स्तंभ वाली चक्की जिसमें बोर्ड के बने पाल हैं।

उठा कर ऊपरी सतह पर लाता है। इन स्कूप पहियों का प्रयोग भूमि से जल निकालने के लिए पूर्वी ऐंग्लिया में बड़े पैमाने पर किया जाता था। 19वीं व 20वीं शताब्दी के प्रारंभ में नॉरफोक ब्रोड्स में पवन चक्कियों का प्रचुरता में प्रयोग होता था। ये स्कूप पहिये पानी को 1 से 1.5 मी. तक ऊंचा उठा सकते थे। परंतु हालैंड में यदि काफी ऊंचाई तक पानी को ऊपर उठाना होता था, तो कई पवन चक्कियों को श्रेणीबद्ध रूप में लगाते थे। इस पवन चक्की में द्वि-सोपानिक गियर चालन (चित्र-8) होता था। आर्किमीडीस पेच के निपुणतापूर्व उपयोग से अनाज पीसने के अतिरिक्त अन्य प्रयोगों के लिए भी पवन चक्की में और अधिक विकास हुए। इन चक्कियों का उपयोग इग्लैंड में नमक वाष्पीकरण क्यारियों तक पानी पहुंचाना, तथा फिनलैंड में मक्का पीसने में भी किया जाता था। सन् 1592 में कार्नेलिस ने नीदरलैंड में लकड़ी चीरने की पहली पवन चालित मशीन बनाई, जिसे एक रैफ्ट पर लगाया गया था ताकि उसे आसानी से वायु की दिशा में घुमाया जा सके।
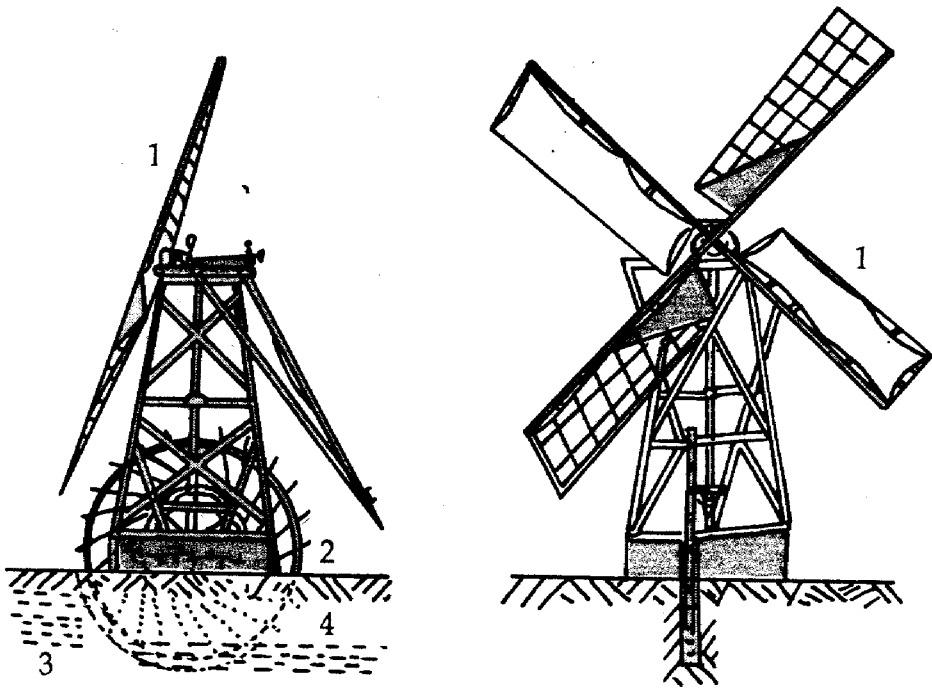
चित्र 8. दलदल पवन चक्की का बगल और सामने का दृश्य। देखिएं : पाल-1, स्कूप पहिया-2 अपवाह-3 व नदी-4

17वीं शताब्दी तक, चक्की चलाने वाले व्यक्ति वायु की दिशा प्राप्त करने के लिए मशीन को या तो हाथ से या चेन और विंच की सहायता से घुमाते थे। यह प्रक्रिया काफी समय लेने वाली और श्रमवाली थी। इग्लैंड के एडमंड ली ने, सन् 1745 में इस कठिन कार्य का एक निदान ढूंढ़ा। उन्होंने एक पंख पुच्छ (फैन टेल) का विकास किया जो कि पांच से आठ फलकों के एक चक्र से बना होता था। यह चक्र स्तंभ चक्की के पुच्छ स्तंभ पर पालों के समकोण लगाया जाता था तथा गियर व्यवस्था द्वारा उन पहियों से जुड़ा होता था जो चक्की के चारों ओर बनी पटरी पर घूमते रहते थे। जब भी वायु की दिशा में परिवर्तन होता है, वह फलकों की बगल में टकराती है और उन्हें घुमाती है जिससे पटरी पर स्थित पहिये तब तक घूमते हैं जब तक कि पूरी पवन चक्की वायु की दिशा फिर से नहीं प्राप्त कर लेती है (चित्र-9)। समकोण फलकों को वायु की सही दिशा में ले आता है।

पंख पुच्छ के आविष्कार से कम श्रमशक्ति लगाकर अधिकतम पवन ऊर्जा का उपयोग करना संभव हुआ। ज्यों-ज्यों पवन चक्कियों का विभिन्न कार्यों में उपयोग और अधिक लाभ के साथ प्रारंभ हुआ, त्यों-त्यों उनकी दक्षता को बढ़ाने के लिए प्रयास
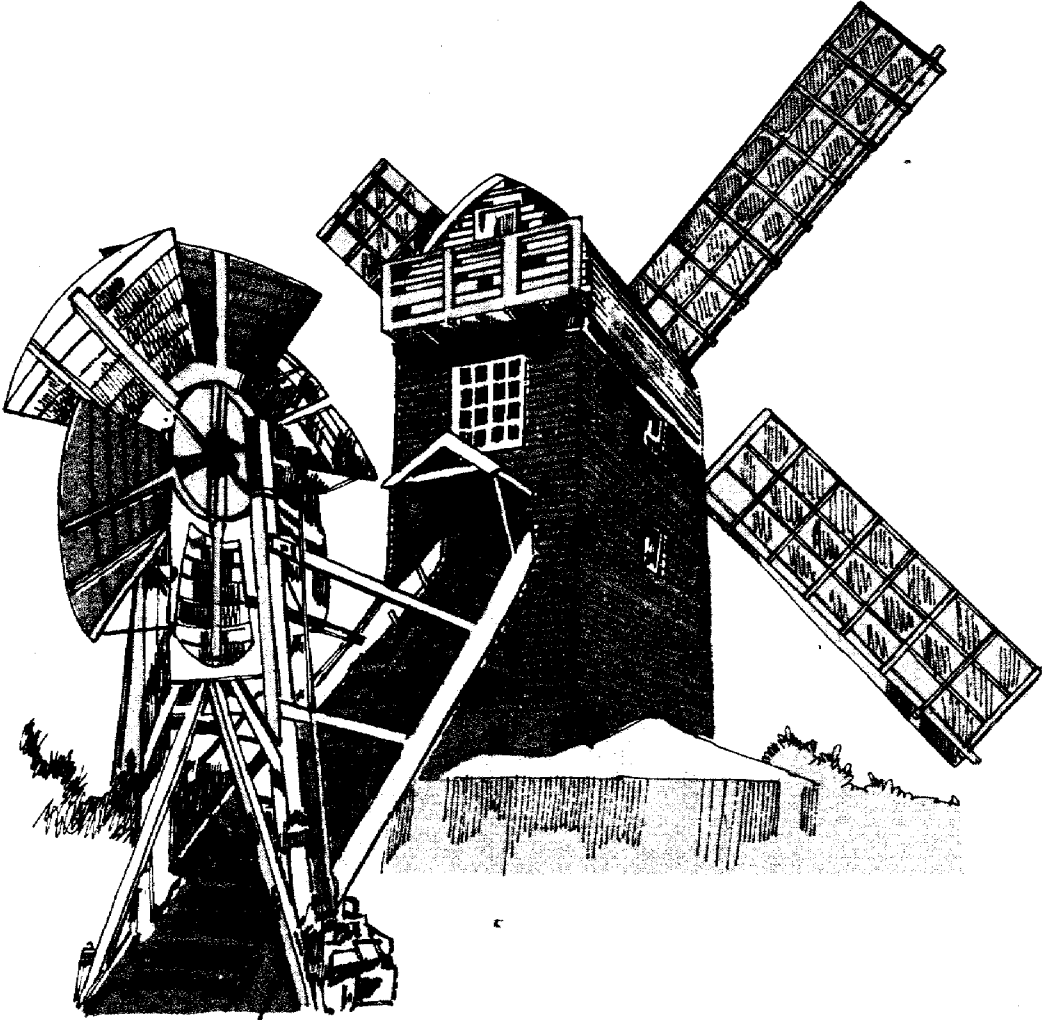
चित्र 9. सफॉक की स्तंभ चक्की। पंखेनुमा पुच्छ स्तंभ खड़े दंड को चलाता है जो गियर के साथ छोटे 'ट्रक पहियों' से जुड़ा है। ट्रक पहिए एक गोलाकार पथ पर चलते हैं। अगल बगल से आने वाली हवाएं पंखेनुमा पुच्छ व पहियों को घुमाकर चक्की को वायु की दिशा में स्थापित कर देती हैं।

प्रारंभ किये जाने लगे। इस दिशा में कोई संगठित प्रयास अथवा शोध कार्य नहीं किये गये, लेकिन उनके रखरखाव की लागत कम करने, उनकी मजबूती बढ़ाने, उनकी दक्षता तथा उपयोगिता बढ़ाने की दिशा में व्यक्तिगत प्रयास सतत रूप से चलते रहे।

पवन चक्की के पाल, जो एक अक्ष अथवा विंड शैफ्ट पर स्थिर होते हैं, एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पाल में पालवाला कपड़ा लकड़ी के फ्रेम या ढांचे पर कसा जाता था। जब चक्की को चलाना होता तो चक्कीवाला इन पालों को फैला

देता था, ठीक उसी प्रकार, जैसे एक नाविक नौका के पाल को फैलाकर ठीक करता है। यह एक श्रम व समय लेने वाला कार्य होता था, क्योंकि प्रत्येक पाल को हाथ से तब तक घुमाना पड़ता था जब तक कि उसका सिरा भूमि के पास न आ जाए। फिर उसके ऊपर चढ़कर कैनवेस को ठीक करना होता था (चित्र-10)। कभी-कभी लकड़ी की पट्टियां लकड़ी के ढांचे पर कसी जाती थीं। ये पट्टियां ऐसी होती थीं कि
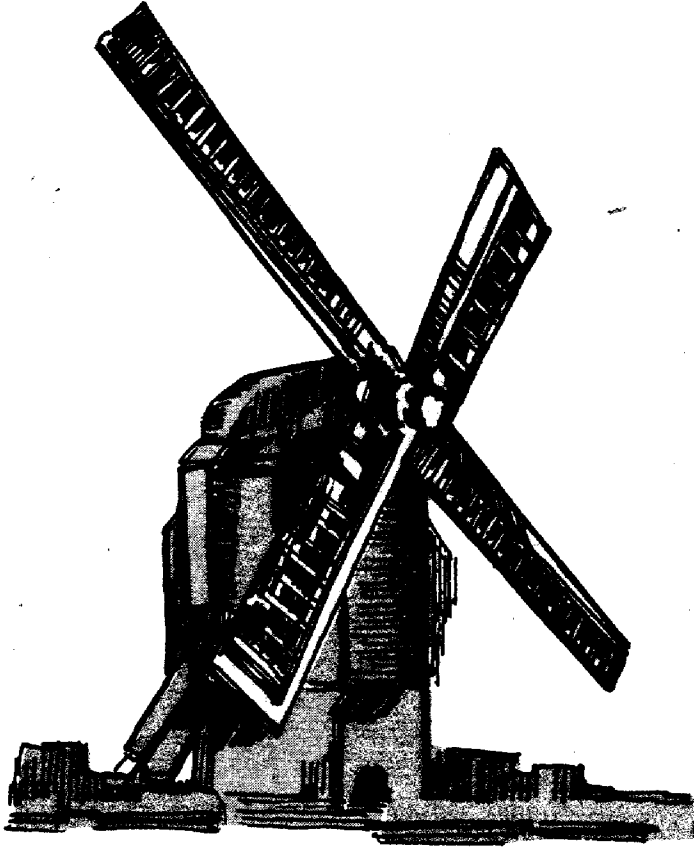
चित्र 10. चार 'आम पालों' वाली स्तंभ चक्की। इसके पाल पास-द-कैले, फ्रांस में लगाए गये हैं।

उन्हें आसानी से निकाला जा सके। पुर्तगाल, भूमध्य सागरीय द्वीपों तथा तुर्की में जिब पालों का प्रयोग किया जाता था। कुछेक जगहों पर जिब पालों का अभी भी प्रयोग किया जाता है। कभी-कभी प्रोपेलर ब्लेडों की तरह लकड़ी के स्थिर फलकों का भी प्रयोग किया जाता था।

17वीं शताब्दी के प्रारंभ तक फलकों की बनावट वैज्ञानिक आधार पर नहीं होती थी। उनकी लंबाई, चौड़ाई और कोण या तो स्वनिर्धारित ढंग से या फिर पवन चक्की

के निर्माणकर्ता के विचारानुसार होते थे। सन् 1759 में एक ब्रिटिश इंजीनियर जान स्मीटन ने अध्ययनों के आधार पर पवन चक्कियों के पालों को और अधिक वैज्ञानिक आधार पर पुनः बनाया। उन्होंने परम्परागत चार पालों की बजाए चक्कियों में पांच, छह या आठ तक पाल लगाये। स्मीटन वह पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने वायु या पवन मशीनों में ढलवां लोहे का प्रयोग किया।

जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, पवन चक्कियों पर शोध कार्य अधिकांशतया व्यक्तिगत स्तर पर ही किया जा रहा था। वर्ष 1772 में, एन्ड्रयू माइक्ले, एक स्कॉटिश पवन चक्की निर्माता, ने एक स्प्रिंगदार पाल बनाया, जिसमें शटर्स को पाल-ढांचे में कब्जों की सहायता से कसा गया था और उनका नियंत्रण प्रत्येक पाल में लगे हुए एक स्प्रिंग द्वारा किया जाता था। कैनवेस के स्थान पर कब्जों की एक शृंखला लगायी गयी थी, लेकिन वह झिलमिली (वेनेटियन ब्लाइंड्स) के फलकों के समान नहीं थी जो कि एक साथ जुड़े रहते हैं तथा एक हस्तचालित गियर व मजबूत स्प्रिंग की मदद से एक ही स्थिति में रखे जाते हैं। यदि वायु की गति अचानक बढ़ जाती तो ये झिरियां (स्लोट्स) खुलकर वायु को निकलने देती थीं, और इस प्रकार यह एक समान गति बनाये रखने में सहायता करती थीं तथा क्षति के भय को कम करती थीं (चित्र-11)। इस प्रकार यह पाल कुछ सीमा तक स्व-नियंत्रित प्रकार के थे।
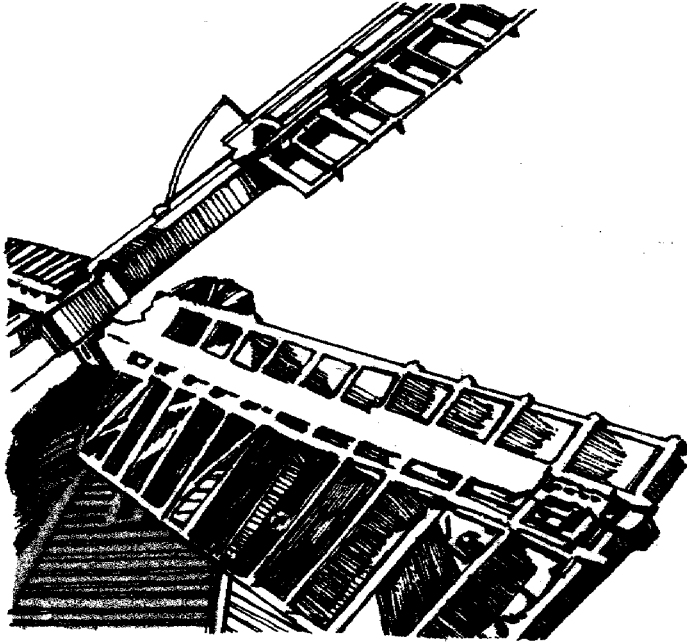
चित्र 11. सैंडविच, केंट में कमानीदार पालों का एक निकट का दृश्य। वायु के झोंके के अचानक आने पर स्प्रिंग का दवाब शटर्स को खोल देता है, जिससे वायु आराम से बाहर निकल जाती है।

परंतु इसमें सबसे बड़ी कमी यह थी कि जब पवन चक्की बंद होती थी तो इसके प्रत्येक स्प्रिंग को उसकी आवश्यकतानुसार तनाव देना पड़ता था। सन् 1789 में स्टीफन हूपर ने इग्लैंड में शटर्स के स्थान पर उन्नत प्रकार के रोलर चालित परदों का प्रयोग किया तथा उनमें एक यांत्रिकी सुदूर नियंत्रक (रिमोट कंट्रोल) लगाया। यह यांत्रिकी छतरी को खोलने व बंद करने की यांत्रिकी के ही समान था। मुख्य वायु-दंड से एक छड़ गुजरती थी जिसे पृथ्वी तक लटकती हुई एक जंजीर के द्वारा हाथ से चलाकर एक साथ सभी पालों को पवन चक्की की कार्यप्रणाली में व्यवधान डाले बिना समायोजित किया जा सकता था। इसके बाद का विकास सन् 1807 में सर विलियम क्युबिट द्वारा पेटेंट पालों का निर्माण था। ये वायु नियंत्रित पाल (चित्र-12) माइक्ले के रोधक (शटर्स) तथा हूपर के सुदूर नियंत्रक दोनों को मिलाकर बनाये गये थे। ये पेटेंट पाल सारे इंग्लैंड तथा उत्तर-पश्चिमी यूरोप के अतिरिक्त और कहीं भी नहीं अपनाये गये।

चित्र 12. सफॉक स्थित एक मीनार चक्की। इसके पाल और पंखेनुमा पुच्छ साफ दिखाई दे रहे हैं।

इसी बीच 12 नवंबर 1838 को प्रारंभ हुआ 'पवन चक्कियों का युद्ध' जिसके दौरान अमेरिका स्थित हंटर लॉजेज संस्था द्वारा कनेडियाई सीमा पर हमले किये गये। हंटर लॉजेज संयुक्त राज्य अमेरिका स्थित एक गुप्त संगठन था, जिसका उद्देश्य कनाडा (जो कि उस समय कई उपनिवेशों में विभाजित था) को ब्रिटिश शासन से मुक्त कराना था। कर्नल नील वान शोल्ज ने शारलोट नाम के स्कूनर को पार किया और पत्थर की एक छह मंजिला पवन चक्की में अपना मोर्चा बनाया। एक छोटे जलयान 'दि एक्सपेरीमेंट' ने शोल्ज का संयुक्त राज्य अमेरिका से संबंध काट दिया। उधर किंग्सटन से 70 नौसैनिक आए जिनके साथ निकटवर्ती देशों के 700 सिपाही थे। इन बलों ने

प्लेट 1. देवगढ़ संयंत्र में स्थापित 55 किलोवाट क्षमता की वेस्टास पवन् टर्बाइन। इसमें तीन फलक, निश्चित गति, तथा स्तंभन नियंत्रित टर्बाइन है। रोटर का व्यास 16 मीटर तथा मीनार की ऊंचाई 23.4 मीटर है।

प्लेट 2. डेनमार्क का स्काई नदी का पवन ऊर्जा फार्म। इसमें वी-27-225 किलोवाट क्षमता की गति नियंत्रित 342 वेस्टास पवन टर्बाइनें लगी हैं।

प्लेट 3. 150 किलोवाट की नार्डटैंक पवन टर्बाइन अधिकतम उत्पादन देती है।
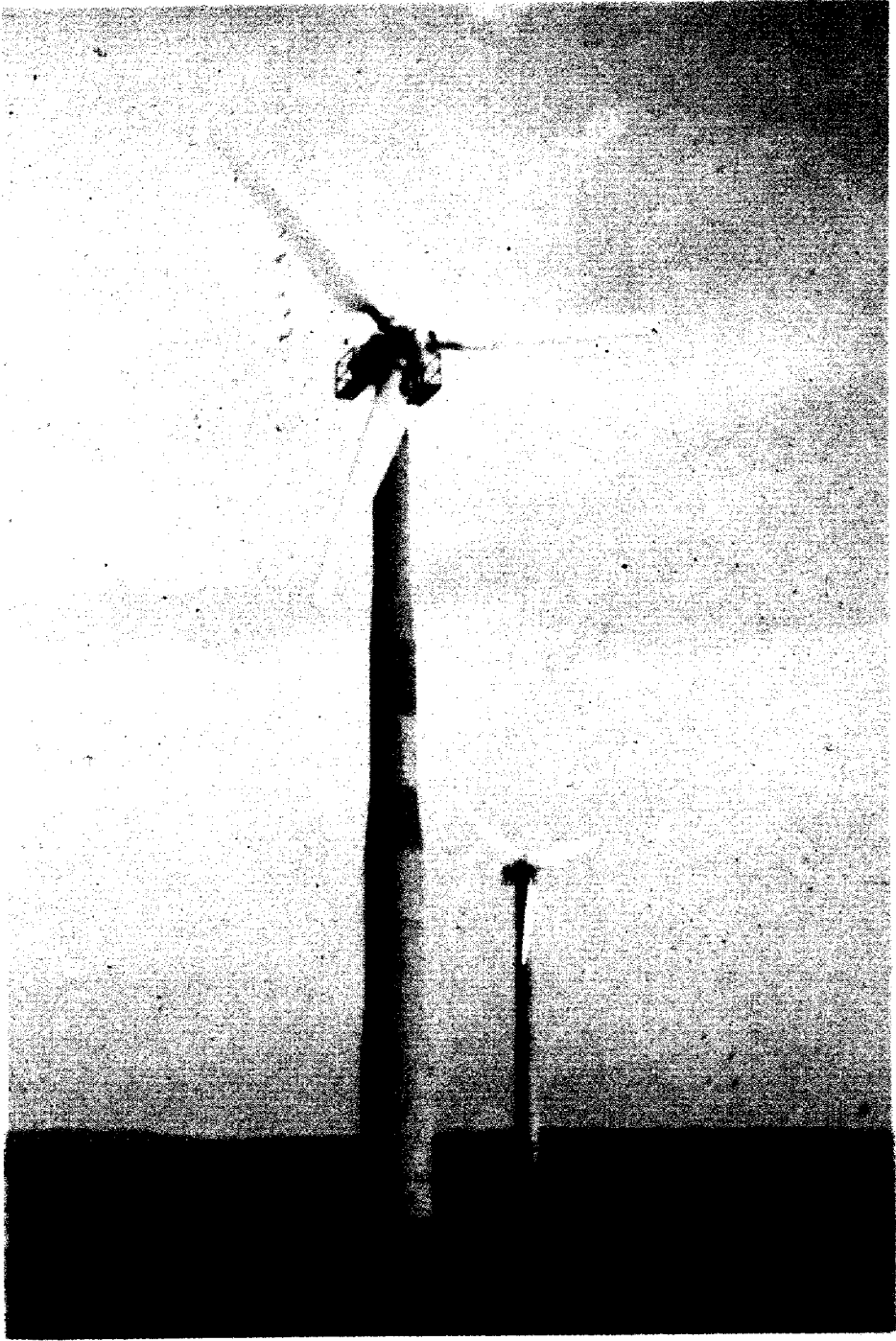
प्लेट 4. पवन टर्बाइनों को अधिक भूमि की आवश्यकता नहीं होती।
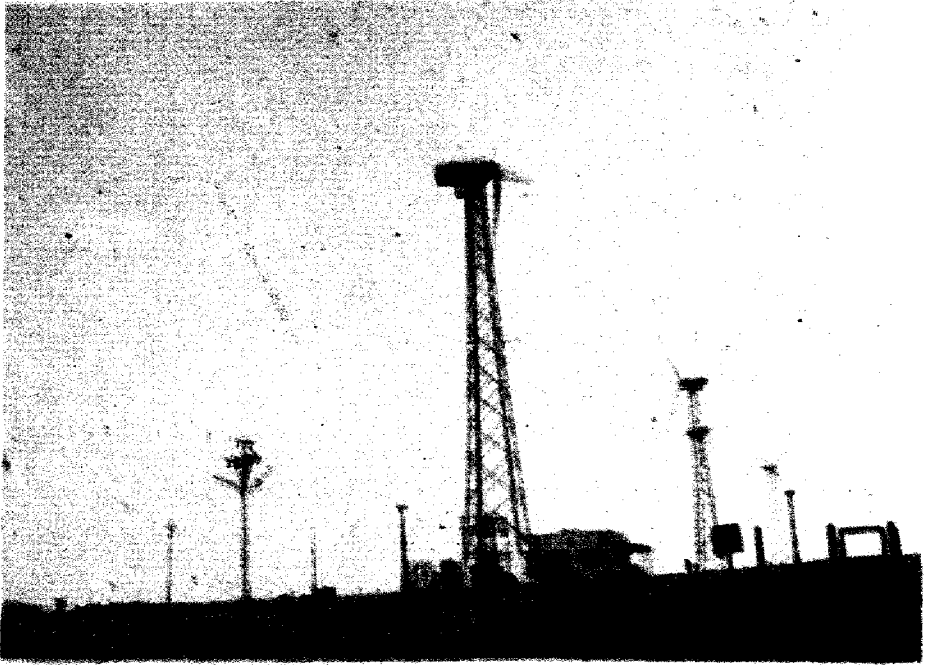
प्लेट 5. देवगढ़ के तटीय क्षेत्र में ऊर्जा उत्पादन करने वाली पवन चक्कियों का समूह। यह महाराष्ट्र का प्रथम ग्रिड-संबद्ध पवन फार्म है, जिसके प्रत्येक पवन यंत्र की स्थापित क्षमता 55 किलोवाट है।
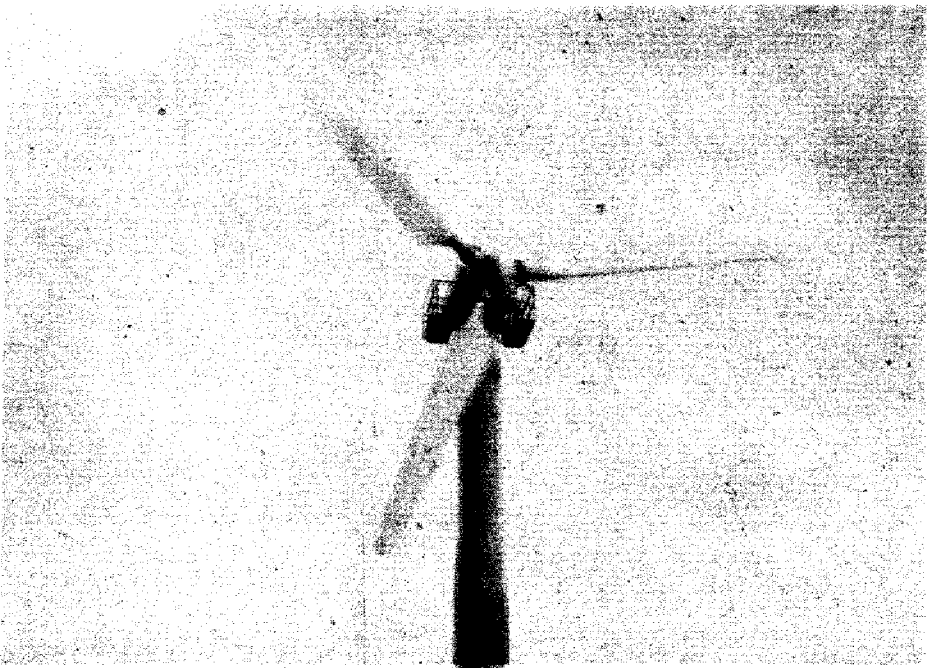
प्लेट 6. पवन ऊर्जा के अधिकतम उपयोग के लिए नये ए[illegible]रोफायल का [illegible]योग इनकी दक्षता को बढ़ाता है।
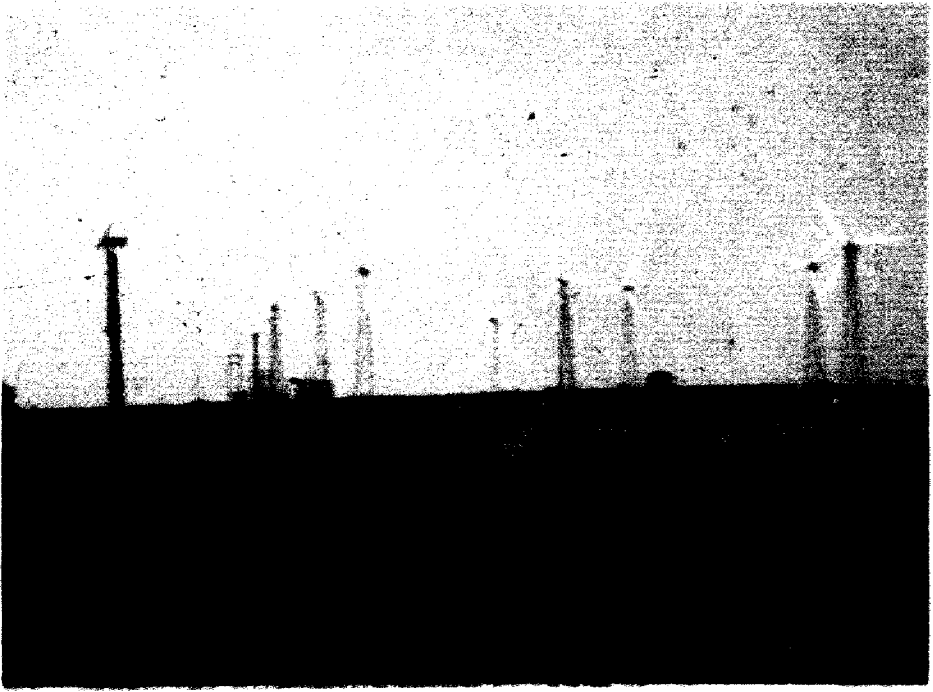
प्लेट 7. बड़े पवन ऊर्जा संयंत्रों से अतिरिक्त लाभ यह है कि इनका परिचालन तथा रखरखाव केंद्रीय रूप से होता है।
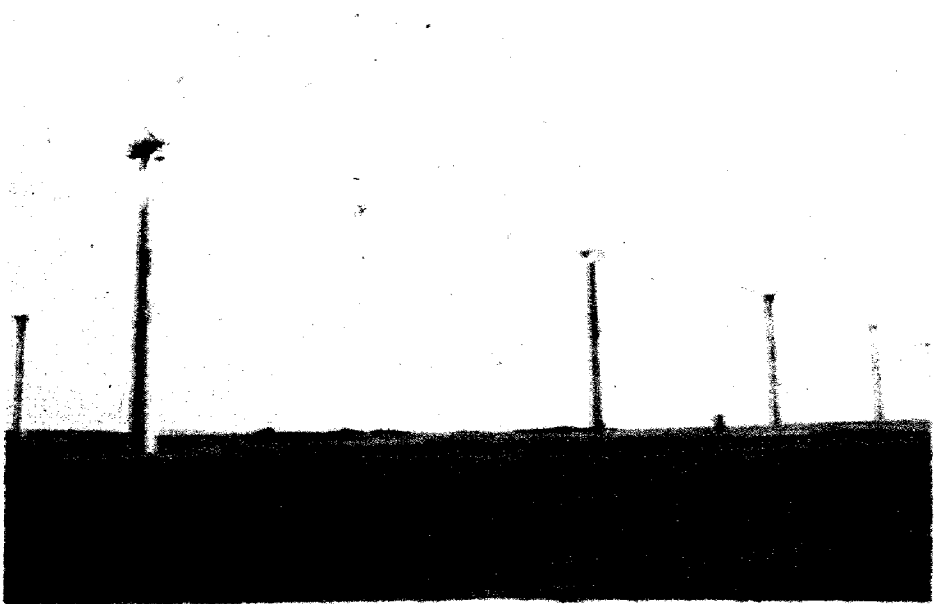
प्लेट 8. भारत के गैर-पारम्परिक ऊर्जा स्रोत विभाग ने आगामी पांच वर्षों में 500 मेगावाट पवन ऊर्जा उत्पादन क्षमता प्राप्त करने का लक्ष्य निर्धारित किया है। हालांकि भारत भर में वायु-दशाएं एक सी नहीं हैं, फिर भी पवन फार्मों का समुचित नियोजन करने पर वित्तीय.रूप से आकर्षक निवेश प्राप्त हो सकता है।

प्लेट 9. एकल टर्बाइनों का उपयोग कृषि एवं व्यापार के उन कार्यों में किया जा सकता है, जहां उत्पादित ऊर्जा का उपयोग आमतौर पर उसी स्थान पर हो जाता है। इन यंत्रों को स्थानीय स्थापनाओं से जोड़कर अतिरिक्त ऊर्जा को ग्रिड में डाला जा सकता है।

प्लेट 10. डेनमार्क पवन ऊर्जा के क्षेत्र में अग्रणी देश है। इस चित्र में वहां की 12.2 मेगावाट क्षमता की टर्बाइन वाला वेलिंग मेरस्क पवन फार्म दर्शाया गया है जिसमें कुल मिलाकर 100 वेस्टास टर्बाइनें हैं।

प्लेट 11. फार्म स्वामी अपनी भूमि पर लगे पवन ऊर्जा यंत्रों की रायल्टी प्राप्त करते हैं। इस स्थान पर पशुओं को चराने की स्वतंत्रता होती है।
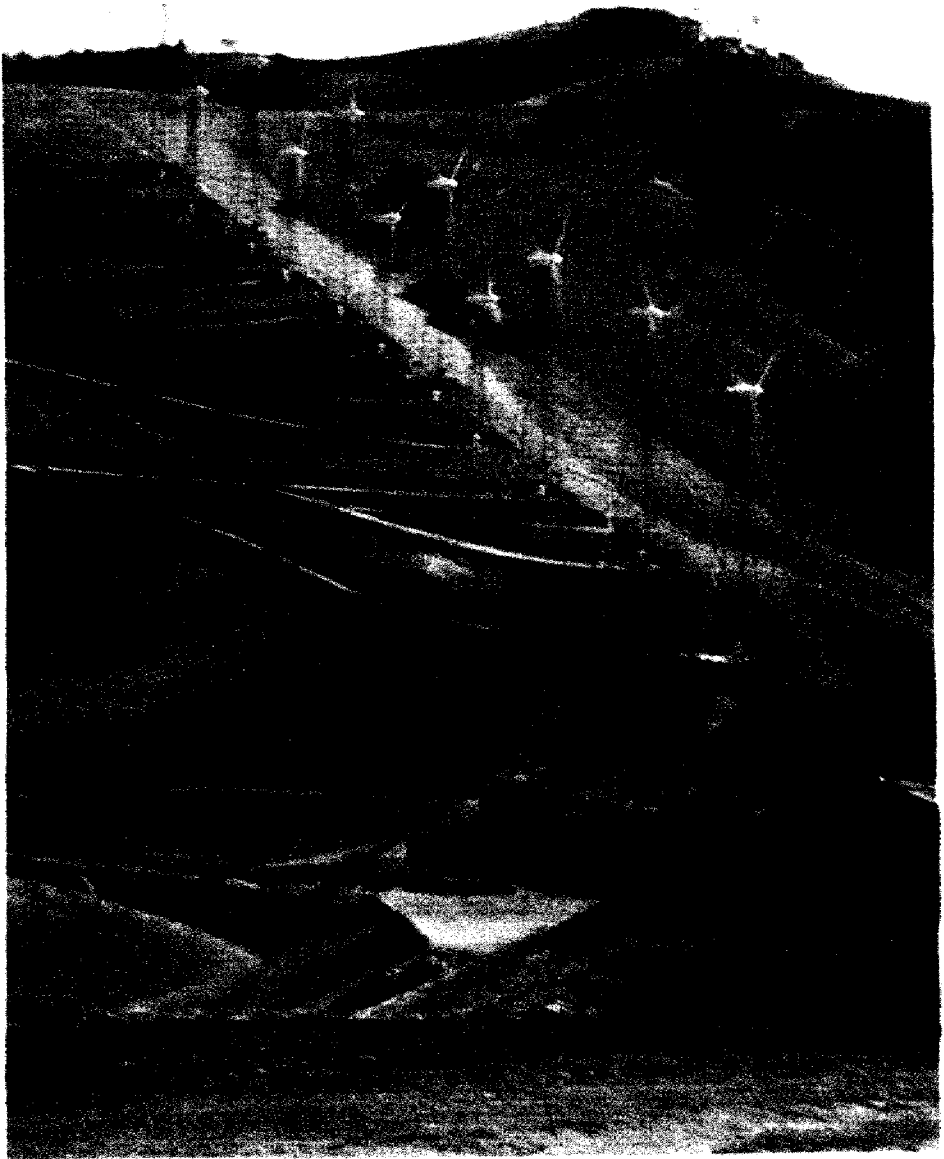
प्लेट : 12. यू एस विंडपावर विश्व के सबसे बड़ा पवन टर्बाइन निर्माता है। ऊपर दिखाए गए यंत्र केलिफोर्निया स्थित आल्टामोंट पास पवन फार्म में स्थापित हैं।

हंटर को उसके ठिकानों से उखाड़ तो दिया परंतु वे पावन चक्की पर कब्जा नहीं कर पाये। दो दिनों की छिट्पुट मुठभेड़ों के बाद कर्नल हेनरी डंडास के नेतृत्व में 83वीं रेजिमेंट की चार कंपनियां, 18 पाउंड की दो तोपों तथा एक होवित्जर के साथ वहां पहुंची गयीं। और जब प्रतिरोध टूट गया तो 16 नवंबर को शोल्ज सहित 137 हमलावरों को बंदी बना लिया गया। हंटर के लगभग 80 लोग मारे गये जबकि ब्रिटेन व कनाडा के 16 लोग मारे गये व 60 घायल हुए।

पवन मशीनें इसलिए और भी प्रसिद्ध हुई कि इस शक्ति को बहुत से उपयोगों में लगाया जा सकता था। इनकी दक्षता तथा विभिन्न कार्यों में इनकी उपयोगिता बढ़ाने के लिए, यह आवश्यक था कि किसी ऐसी यांत्रिक शक्ति का विकास किया जाये जिससे पवन मशीन की चक्राकार गति को रोका या नियंत्रित किया जा सके। सन् 1787 में इग्लैंड के थॉमस मीड ने पहली बार एक केंद्रापसारी नियंत्रक लगाकर पुनर्निवेशन यांत्रिकी का प्रयोग करते हुए चक्की के पाटों में एक पूर्व-निर्धारित अंतर बनाये रखा तथा पिसाई की उत्तमता को सुनिश्चित किया। इस प्रकार पंख-पुच्छ, पेटेंट पालों का उपयोग, नियंत्रक तथा वायु शक्ति चालित बोरा उठाने के यंत्र (सैक हॉयस्ट) के सम्मिलित उपयोग की दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि यह एक प्रथम स्वचालित चक्की थी (चित्र-13)। सन् 1854 में संयुक्त राज्य अमेरिका के डेनियल हालाडे ने पवन पम्प का प्रयोग आरंभ किया। सन् 1860 में इंग्लैंड के आर. कैचपोल ने पेटेंट पालों के साथ ही वायुदाब चालित ब्रेक जोड़कर उनका नया डिजाइन तैयार किया। यह नया डिजाइन बहुत ही सफल हुआ तथा इसके बाद एक के बाद एक विचारोत्तेजक विचार इसकी प्रेरणा प्राप्त करके सामने आने लगे। सन् 1883 में स्टीवार्ट पैरी ने वायु चालित पम्प के डिजाइन में सुधार किया। इन्होंने इस पम्प को स्टील में बनाया। इसका डिजाइन काफी सरल था। इसमें कई छोटे-छोटे फलक (वेन) एक पहिये में त्रैज्यिक (रेडियल) रूप में लगे थे। इसे संपूर्ण विश्व में अपनाया गया क्योंकि यह अपेक्षाकृत कम कार्यकुशल होते हुए भी, सस्ता और विश्वसनीय था। इसमें गति-नियंत्रण स्वचालित था, एक पुच्छ फलक पहिये को वायु की दिशा में बनाये रखता था, और चक्की का पहिया इस प्रकार लगाया गया था कि जैसे ही वायु की गति में परिवर्तन हो वैसे ही चक्की अपने खड़े अक्ष पर घूम जाये तथा उसका प्रभावकारी क्षेत्र बढ़ जाये व गति भी स्थिर रहे (चित्र-14)।

इन संशोधनों के परिणामस्वरूप पवन मशीनों की उपयोगिता तथा दक्षता में वृद्धि हुई। पवन चक्कियों का उपयोग अब अनेक कामों में होता था, जैसे अनाज पीसना, झीलों और दलदलों को खाली करना, सिंचाई तथा अन्य कई उद्योग, यथा लकड़ी चीरना,
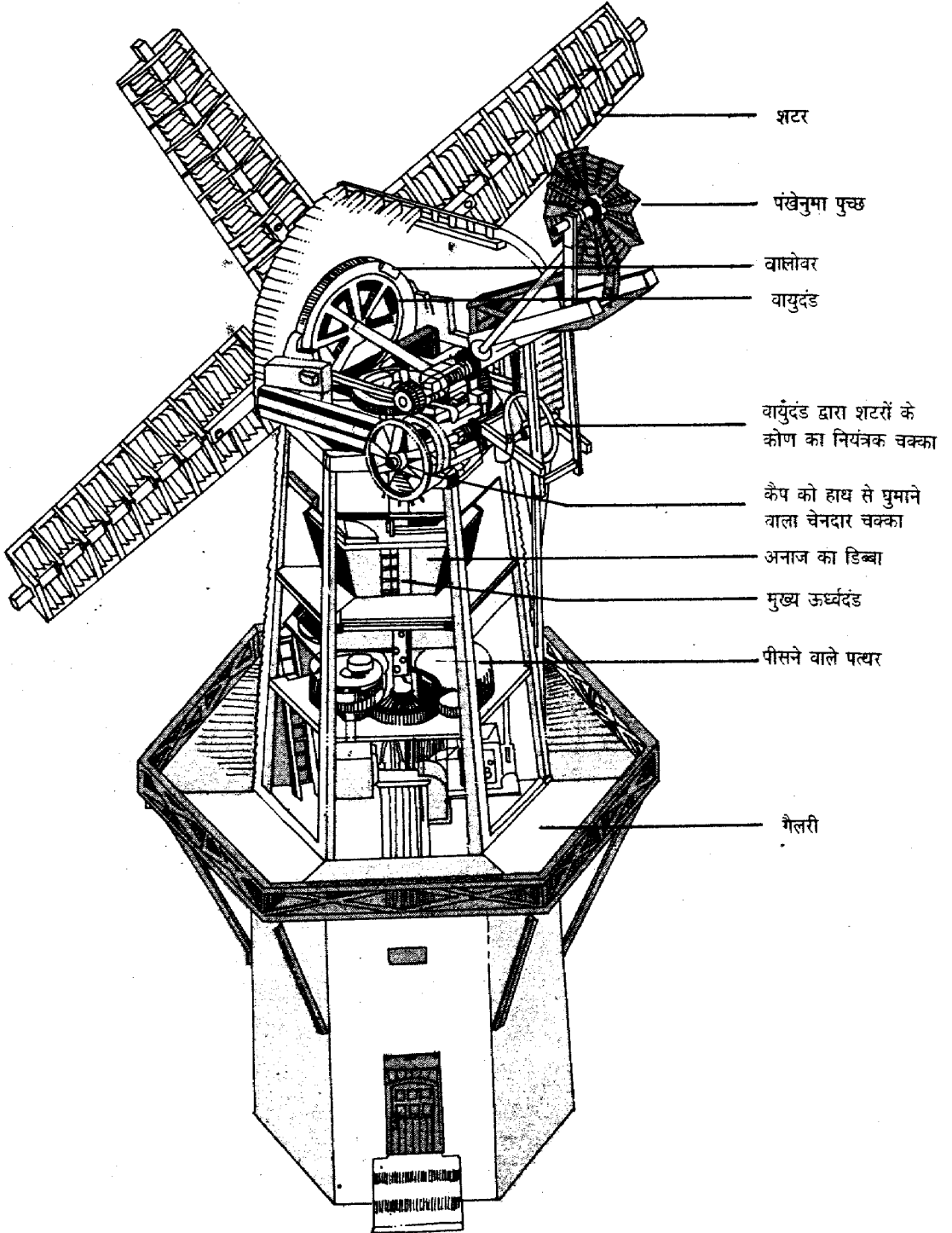
चित्र 13. एक पवन चक्की की संरचना। इसके कुछ खास-खास भाग भी दिखाए गए हैं।

तिलहनों से तेल निकालना, लकड़ी के तख्ते बनाना, पत्थरों पर पालिश करना, कागज बनाना तथा सुंघनी, मसाले पीसना, आदि। वेस्ट इंडीज में पवन चक्कियों का उपयोग गन्ना पेरने के लिए किया गया। कुछ पवन चक्कियों को जो कि विशाल भवनों के समान लगती हैं, कई यूरोपीय देशों में भली-भांति परिरक्षित रखा गया है। पोलैंड व पुर्तगाल में उस समय क्षैतिज चक्कियों का उपयोग किया जा रहा था परंतु उनमें से अब कोई भी बाकी नहीं बची।
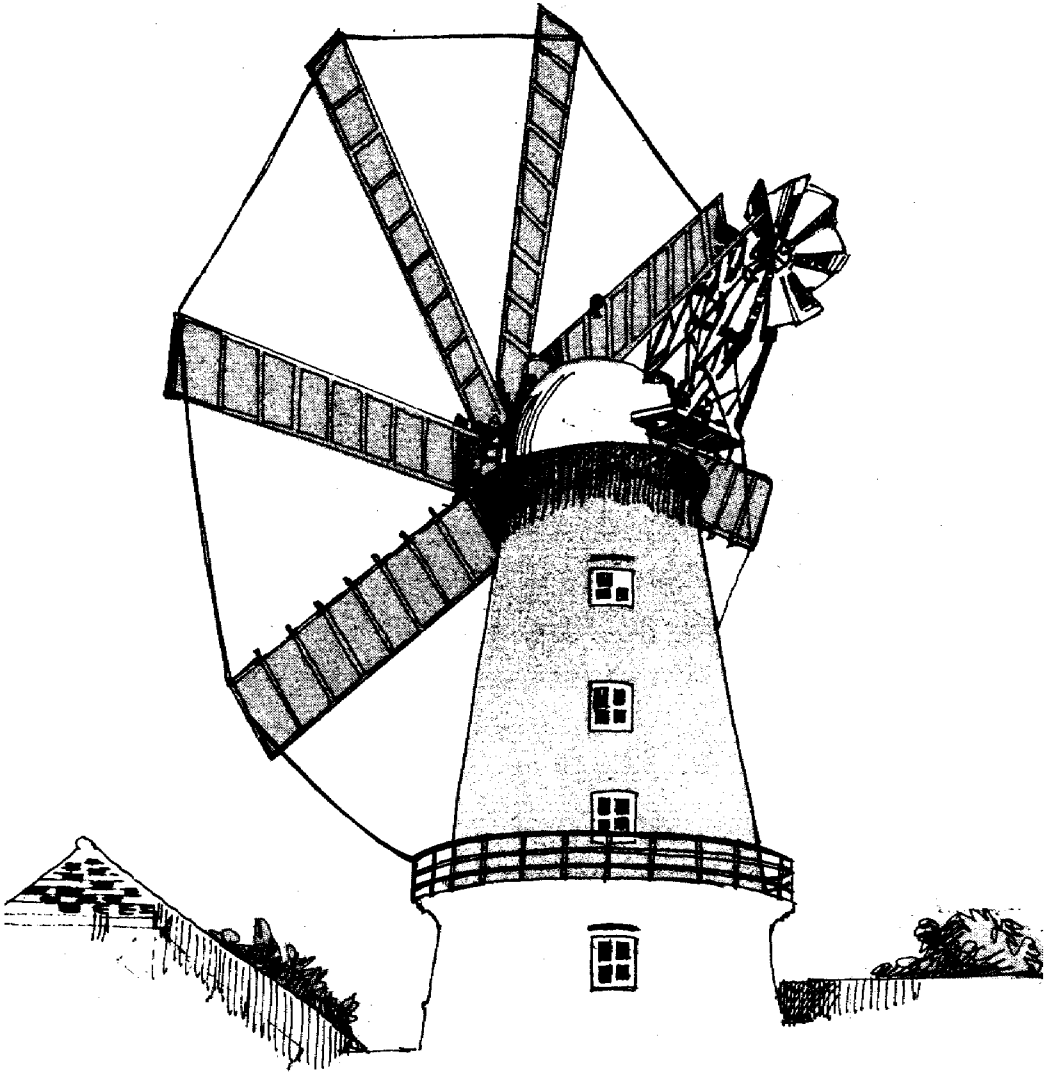
चित्र 14. आठ पालों वाली एक ऊंची मीनार चक्की। अधिक ऊंचाई होने से अधिक वायु प्राप्त होती है।

अमेरिकी प्रकार का पानी उठाने वाला पवन-पहिया सारे संसार में विख्यात है। इसकी पांच प्रमुख किस्में हुआ करती थीं। इसके विशिष्ट डिजाइन में सीधे कम चौड़ाई वाले, धातु के फलक होते थे जो पंख पुच्छ की ही तरह चक्र के सेक्शनों के अभिकव कोण पर लगे रहते थे। वायु के वेग में परिवर्तन की क्षतिपूर्ति तथा गति नियंत्रण या तो नियंत्रक वायु फलक द्वारा किया जाता था या केंद्रापसारी नियंत्रक द्वारा या फलकों पर वायु दाब को रोकने के लिए स्प्रिंग प्रतिक्रिया द्वारा।

इस प्रकार की कुछ पवन चक्कियों के आकार को सरल और कारगर बनाने के लिए धारा-रेखण (स्ट्रीमलाइनिंग) का भी प्रयोग किया गया था। 20वीं शताब्दी के प्रारंभिक काल में, लैंकास्टर बर्ने ने सही या ठीक संतुलित धारारेखित प्रकार के पवन चक्की के फलकों का निर्माण किया जो कि एक केंद्र के नीचे जुड़े हुए थे। वायु दाब बढ़ने के साथ ही ये पीछे मुड़ जाते थे और इस प्रकार स्वयं ही वायु रोधक या 'स्पायलर' का कार्य किया करते थे।

डेनमार्क के पी. ल' कूर ने सन् 1980 में विद्युत उत्पादन स्रोत के लिए सर्वप्रथम पवन चक्की का उपयोग किया। इस पवन चक्की में पेटेंट पालों के साथ युग्म रूप में दो पंख-पुच्छों को स्टील की एक मीनार पर लगाया गया था। प्रथम विश्व युद्ध के बाद पवन चक्कियों में एरोफायल खंडों को लगाने के साथ ही नये युग का सूत्रपात हुआ। सन् 1923 में ए.जे. डेक्कर ने नीदरलैंड में पालों के वायु दिशा वाले किनारों (अग्रकोरों) पर एरोफायल खंडों के सिद्धांत का सफलतापूर्वक उपयोग किया। इस विचार को स्वीकार किया गया और परिणामतया नये एरोफायल का जन्म हुआ जो स्वचालित रूप से स्वयं ही पालों की अधिकतम गति को नियंत्रित करते थे। इस डिजाइन से पवन चक्कियों की दक्षता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई क्योंकि इससे उपलब्ध वायु क्षमता का अधिकतम उपयोग किया गया। सन् 1931 में क्रीमिया में एरोफायल पाल वाली एक वायु टर्बाइन लगायी गयी, जिसके द्वारा उत्पादित विद्युत ऊर्जा को स्थानीय उपयोग में लाया गया। दो फलकों वाली टर्बाइनों का परीक्षण संयुक्त राज्य अमेरिका, इंग्लैंड तथा फ्रांस में किया गया। 19वीं शताब्दी के प्रारंभ तक, केवल हालैंड ही विश्व का एक ऐसा देश था, जिसमें 9,000 से अधिक पवन चक्कियां कार्यरत थीं तथा ये पवन चक्कियां ऊर्ज़ा के एक अनिवार्य स्रोत के रूप में कार्यरत थीं।

इस शताब्दी के द्वितीय चतुर्थांश में कुछ प्रगति अवश्य हुई जब वायु शक्ति, सामान्यतया उत्सुकता के स्तर तक पहुंच गयी। उदाहरण के लिए, डेरियस ने बूर्गेट, फ्रांस में सन् 1929 में एक वायु-जनित्र (एरोजेमरेटर) बनाया जिसकी मीनार 20 मी. ऊंची थी तथा उसके फलक भी उसी परिमाप (व्यास) के थे। वायु शक्ति से चालित

दिष्ट धारा वाला एक जेनरेटर भी था जिसकी क्षमता 6 मी. प्रति सैकेंड की वायु गति पर 0.015 मेगावाट आंकी गयी। 1950 के बाद के वर्षों में 0.8 मेगावाट क्षमता वाली उच्च वायु गति पर कार्यक्षम एक दूसरी पवन चक्की भी फ्रांस में ही बनायी गयी।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद, वैज्ञानिकों का ध्यान गैर-परम्परागत ऊर्जा स्रोतों (जैसे पवन ऊर्जा) आदि का उपयोग बढ़ाने की और गया ताकि उसे कच्चे तेल के विकल्प के रूप में अपनाया जाये, क्योंकि कच्चे तेल की आपूर्ति एक न एक दिन समाप्त होनी ही है। अतः पवन ऊर्जा प्रौद्योगिकी में सन् 1950 तक कुछ न कुछ विकास होता ही रहा। डेनमार्क, रूस, ब्रिटेन, फ्रांस और अमेरिका आदि के वैज्ञानिक ऐसी अनेक पवन मशीनों और टर्बाइनों पर प्रयोग करते रहे जो 100 किलोवाट या उससे अधिक ऊर्जा उत्पन्न कर सकें।

1950 के दशक के मध्य में फ्रांसीसी इंजीनियर जे. एन्ड्रयू ने एन्फील्ड केबिल संस्थान के लिए ग्रेट ब्रिटेन में वातीय वितरण तंत्र (न्यूमेटिक ट्रांसमिशन सिस्टम) का प्रयोग करते हुए एक पवन जनित्र (एरोजेनरेटर) का निर्माण किया। इसकी मीनार 30 मी. ऊंची, फलक (ब्लेड) 24 मी. व्यास के तथा इसकी क्षमता 13.4 मी. प्रति सैकेंड की गति पर 0.1 मेगावाट थी। यह इकाई अल्जीरिया में अनेक वर्षों तक सफलतापूर्वक कार्य करती रही।

1950 के दशक के उत्तरार्ध में, डेनमार्क की विद्युत कंपनियों ने पवन शक्ति के प्रयोग हेतु विभिन्न कार्यक्रम प्रारंभ किये। इन प्रयोगों की समाप्ति तथा उसके सफलतापूर्वक परीक्षण के बाद सुप्रसिद्ध गेडसेर मिल का निर्माण हुआ। इसमें 200 किलोवाट वाली वायु टर्बाइन है और इसका जेनरेटर अतुल्यकालिक किस्म का है। यह मिल दस वर्षों से भी अधिक समय तक कार्यरत रही। परम्परागत पवन चक्कियां मुख्यतया कृषि अर्थव्यवस्था वाले क्षेत्रों में ही चल रही हैं क्योंकि इन्हें चलाने में काफी कठिनाइयां होती हैं। इनकी संस्था भी कम होती जा रही है। पुर्तगाल में सन् 1965 तक 1000 से भी अधिक पवन चक्कियां चल रही थीं। परंतु तत्पश्चात पवन चक्कियों का उपयोग घट गया क्योंकि वर्तमान युग के जीवाश्म ईंधन तंत्र के समक्ष ये प्रतियोगिता में ठहर नहीं पायीं। साथ ही, चूंकि यह सब प्रयास सामान्यतया व्यक्तियों की निजी वित्तीय सहायता से ही सम्पन्न किये जाते थे, अतः इनमें सतत शोधकार्य का भी अभाव रहा।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अनेकों पवन चालित जेनरेटरों का प्रयोगात्मक रूप में निर्माण किया गया परंतु उनमें से कोई भी सफल नहीं हो पाया।

सन् 1974 में, नेशनल एरोनॉटिक्स एंड स्पेस एडमिनिस्ट्रेशन (नासा) ने सैंडस्की,

ओहियो में एक प्रयोगात्मक पवन चालित जेनरेटर लगाया। इसकी मीनार 30 मी. ऊंची, घूर्णक (रोटर) 38 मी. व्यास का था। इसका अपेक्षित उत्पादन 460 वोल्ट पर 100 किलोवाट था। यह तीन फेज वाला था और इसमें 60 हर्ट्स प्रत्यावर्ती धारा उत्पन्न होती थी। बंद होने के पहले तक, इस इकाई से बड़े पवन (एरो) जेनरेटरों के डिजाइन निर्माण तथा परिचालन में काफी अनुभव प्राप्त हुआ है।

वर्ष 1976 में, डेनमार्क की सरकार ने पवन ऊर्जा के विकास हेतु एक कार्यक्रम प्रारंभ किया। इसी प्रकार के क्रियाकलाप विश्व के लगभग सभी औद्योगिक देशों में चल रहे हैं, उदाहरण के लिए नासा की 2,000 किलोवाट की टर्बाइन परियोजना को विश्वव्यापी प्रशंसा प्राप्त हुई है।

2

पवन चक्की का मूल सिद्धांत

सौर विकिरण सर्वप्रथम पृथ्वी की सतह या भूपृष्ठ द्वारा अवशोषित होता है, और तत्पश्चात विभिन्न रूपों में आसपास के वायुमंडल में स्थानांतरित हो जाता है। चूंकि पृथ्वी की सतह एक समान या समतल नहीं है, अतः अवशोषित ऊर्जा की मात्रा भी स्थान व समय के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है। इसके परिणामस्वरूप तापक्रम, घनत्व तथा दबाव संबंधी विभिन्नताएं उत्पन्न होती हैं जो फिर ऐसे बलों को उत्पन्न करती हैं जो वायु को एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रवाहित होने के लिए विवश कर देते हैं। गर्म होने से विस्तारित वायु जो कि गर्म होने से हल्की हो जाती है, ऊपर को उठती है तथा ऊपर की ठंडी वायु नीचे आकर उसका स्थान ले लेती है। इसके फलस्वरूप वायुमंडल में अर्ध-स्थायी पेटर्न उत्पन्न हो जाते हैं। वायु का चलन सतह के असमान गर्म होने के कारण होता है।

पवन, पृथ्वी की सतह के संदर्भ में वायु की गति को कहते हैं, अतः इसमें कुछ शक्ति या ऊर्जा होती है। पवन चक्की इस गति को अपने चलन से धीमा करती है और इस प्रक्रिया में उसमें निहित ऊर्जा को पकड़ लेती है। इस प्रकार यह पवन ऊर्जा को यांत्रिक ऊर्जा में परिवर्तित कर देती है।

अधिकांश पवन चालित यंत्रों में पाल, फलक या ब्लेड्स या बालटियां एक केंद्रीय दंड (सेंट्रल शैफ्ट) से जुड़े होते हैं। निष्कर्षित ऊर्जा दंड को घूमाने के लिए प्रेरित करती है। यह घूमता हुआ दंड एक ज़ेनरेटर को शक्ति प्रदान कर सकता है, या पानी के पम्प को चला सकता है, अथवा पवन चक्की के पाटों को चलाकर अनाज पीस सकता है।

वायुगतिकी या एरोडायनेमिक्स के दो महत्वपूर्ण सिद्धांतों अर्थात् उत्थापन (उठान) (लिफ्ट) तथा कर्षण (खिंचाव) (ड्रैग) का पवन चक्की के प्रचालन में उपयोग किया जाता है। पवन घूर्णक को या तो फलकों को उठाकर अथवा साधारण रूप से फलकों को धकेलकर ही घुमा सकती है। व्यावहारिक रूप में एक पवन चक्की पवन में निहित समस्त ऊर्जा का निष्कर्षण नहीं कर सकती है, क्योंकि यह अनेक घटकों, यथा वायु

का घनत्व, पवन की गति, वायुमंडलीय दबाव, रोटर का क्षेत्रफल तथा रोटर का डिजाइन आदि पर निर्भर करती है। अधिकतम संभावित ऊर्जा का निष्कर्षण करने तथा उपयोग में लाने में दोनों सिद्धांतों (उठान तथा खिंचाव) का पवन चक्की का डिजाइन करते समय विशिष्ट उपयोग के अनुसार समायोजन किया जाना चाहिए (चित्र-15)।

वायुगतिक उठान या खिंचाव का सामान्य उदाहरण एक ऐसा विशिष्ट बल हैं जो कि वायुयान के परों पर लगता है। जब एक वायुयान हवा में उड़ता है तो उसके परों (एरोफायल) का विशिष्ट आकार पंखों के ऊपर कम दबाव वाला क्षेत्र तथा पंखों के नीचे अधिक दबाव वाला क्षेत्र उत्पन्न कर देता है। पंखों के ऊपर तथा नीचे के दबाव का यही अंतर ही वास्तव में वायुयान को हवा में उठाये रखता है। ठीक इसी सिद्धांत का प्रयोग अधिकांश उच्च-तकनीक वाली पवन चालित टर्बाइनों में किया जाता है। चित्र-16 देखें, जिसमें एक प्रारूपिक पवन चालित टर्बाइन को दिखाया गया है। उठान बल का ही आजकल के सुदक्ष पवन चालित संयंत्रों में उपयोग किया जाता है।
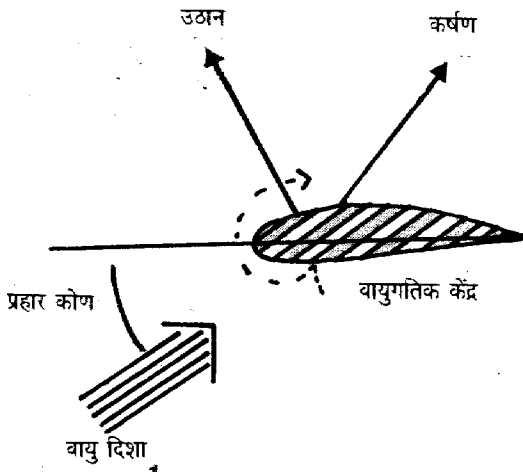
चित्र 15. इस चित्र में पवन की दिशा तथा उठान व कर्षण दिखाया गया है।

कम गति वाली मशीनों में अपेक्षाकृत उच्च ऐंठन वाला बल या टॉर्क (ट्विस्टिंग फोर्स), उच्च गति वाली मशीनों से ज्यादा होता है। उच्च टॉर्क कई यांत्रिक उपयोगों में प्राथमिक महत्व रखता है, जैसे कि पानी के पम्प। अतः इस प्रकार की पवन मशीनों के फलकों का डिजाइन सरल होता है, क्योंकि यह मशीन कम गति वाले प्रकार की है और इसे अपेक्षाकृत अधिक बड़ा ब्लेड का क्षेत्र चाहिए। अतः कम गति वाली मशीनें पालों या झुके हुए (कर्व्ड) प्लेटों वाले ब्लेडों से भली-भांति काम कर सकती हैं जबकि तीव्र गति वाली मशीनों में एरोफायल प्रकार के ब्लेडों की आवश्यकता होती है ताकि खिंचाव बलों के प्रतिकूल प्रभाव को कम से कम किया जा सके।

पवन चालित यंत्र भी दो प्रकार के होते हैं :

1. क्षैतिज अक्षीय पवन मशीन जिसमें घूमने वाला अक्ष पवन की दिशा या प्रवाह
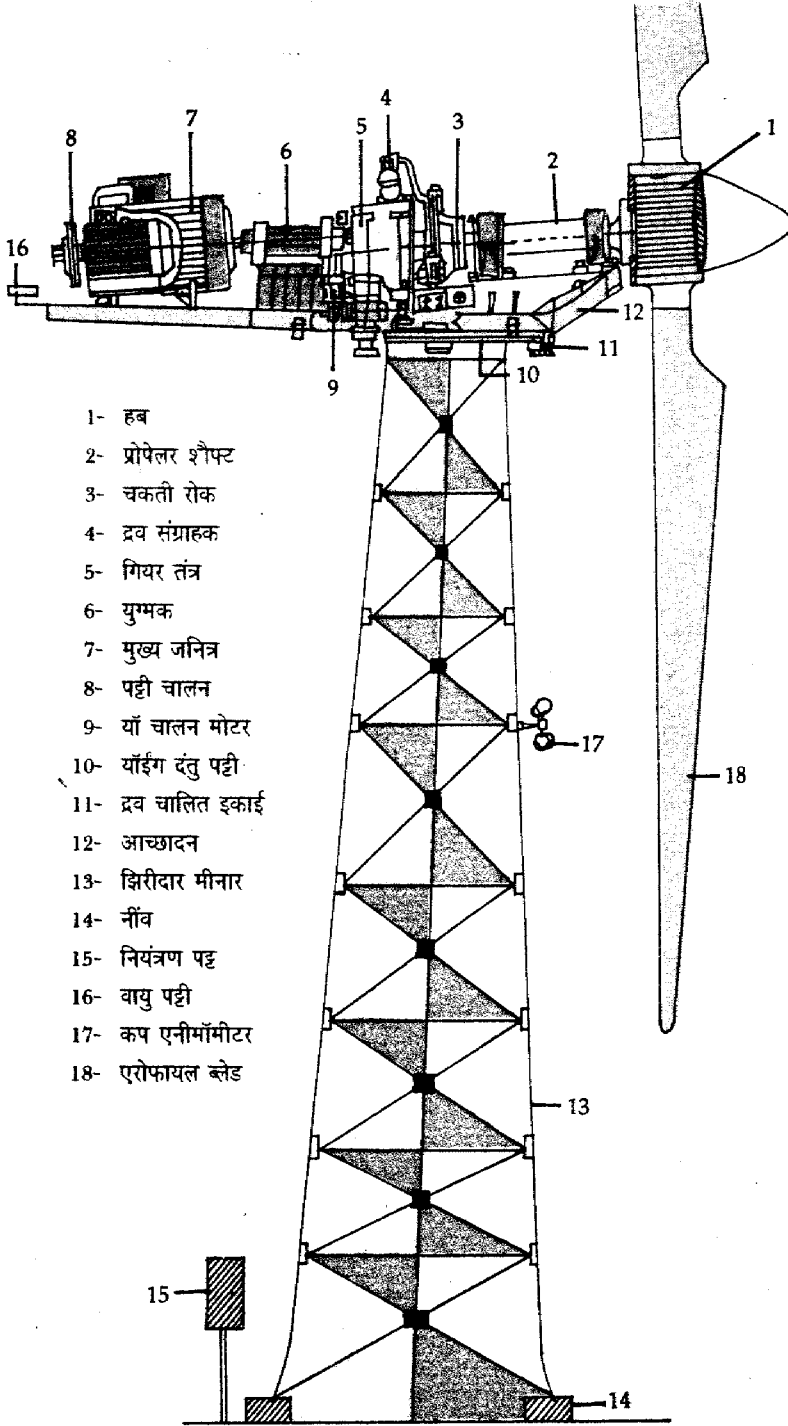
चित्र 16. एक आम पवन टर्बाइन।
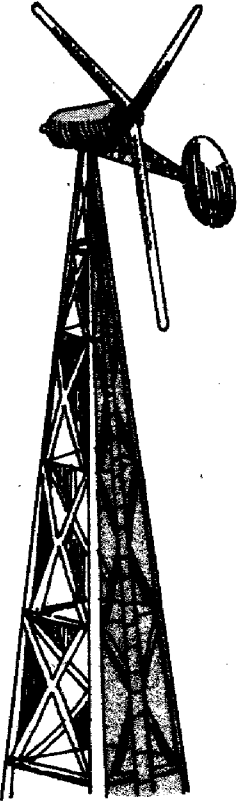
के समानांतर होता है तथा भूमि के भी समानांतर होता है। इसमें दो या दो से अधिक वायुगतिक पर (एरोडायनेमिक ब्लेड) होते हैं जो कि एक क्षैतिज शैफ्ट पर कसे हुए होते हैं। चित्र-17 क में दर्शाया गया पवन संयंत्र एक छोटी क्षैतिज अक्षीय पवन चालित टर्बाइन है जो कि ग्रामीण प्रयोग हेतु बनाया गया है। इसके फलकों के किनारे पवन की गति से कई गुणा अधिक तीव्रता से घूमते हैं जिसके फलस्वरूप उच्च कार्यदक्षता प्राप्त होती है। परों की ढलान उसी गतिक सिद्धांत के आधार पर डिजाइन की गयी है जिसका वायुयानों में प्रयोग किया जाता है। केलिफोर्निया स्थित पवन फार्मों में मुख्यतया इसी प्रकार के संयंत्रों का प्रयोग किया जा रहा है, जिनकी उत्पादन क्षमता कुछ किलोवाट से लेकर 200 किलोवाट प्रति संयंत्र से भी अधिक है। कम गति वाले क्षैतिज-अक्षीय पवन संयंत्र अधिकांशतया यांत्रिक उपयोग, यथा पानी के पम्प आदि के रूप में प्रयोग किये जाते हैं (चित्र-17 ख)।

चित्र 17 (क). गांवों के लिए एक छोटी, क्षैतिज अक्ष वाली डी. सी. पवन चक्की।
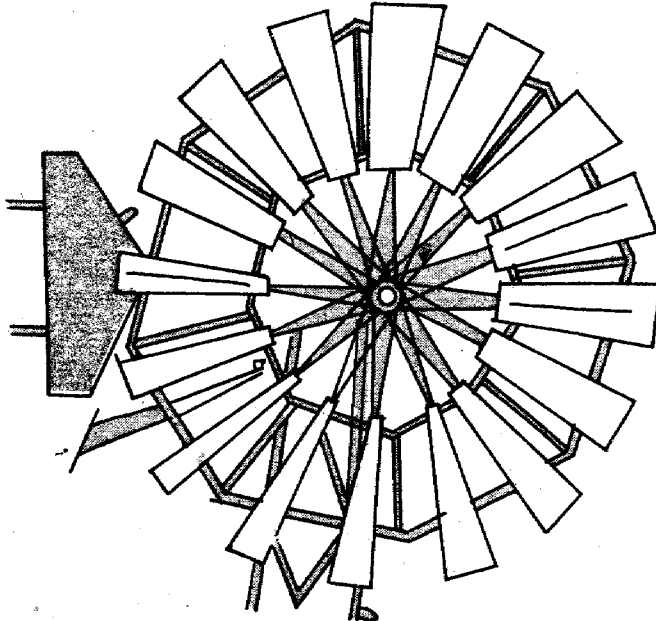
चित्र 17(ख). कम गति की क्षैतिज अक्ष वाली, कई परों वाली पवन चक्की।

अन्य सुविदित प्रकारों को चित्र-18 में दर्शाया गया है। जब आधुनिक प्रोपेलर को पवन टर्बाइन के रूप में प्रयोग किया जाता है तो वह घूर्णक दंड (रोटेटिंग शैफ्ट) की गति को नियंत्रित करके अधिकतम दक्षता प्राप्त करता है, तथा इस प्रक्रिया में वह चर-अंतराल (वेरिएबल पिच) का उपयोग करता है। इस प्रकार के एक डिजाइन में अड़तालीस पतले और संकरे फलक उन्हें चारों ओर तनाव में खिंचाव द्वारा रखे हुए हूप या छल्ले द्वारा एक वृत्ताकार स्थिति में रखकर जेनरेटर से जुड़े चालन दंड या ड्राइव शैफ्ट को बिना किसी उत्थापक गियर व्यवस्था के उच्च गति से घुमाता है। घूर्णकों (रोटरों) के पवन गति भार के विभिन्न घटकों को चित्र-19 में दर्शाया गया है।

एक समूह के रूप में, क्षैतिज-अक्षीय घूर्णकों के परों को उठान क्रिया द्वारा प्रचालित किया जाता है। परिणामस्वरूप गति अनुपात, पर की नोक की गति के अनुपात में, पवन की भांति काफी अधिक होता है, जो कि कभी-कभी एक पर बारह तक की अवस्था में पहुंच जाता है। पवन चालित टर्बाइनों की दक्षता इस उच्च गति अनुपातों पर काफी अधिक होती है।

2. ऊर्ध्व-अक्षीय पवन चालित मशीनें वे होती हैं, जिनमें घूर्णन-अक्ष या रोटेटिंग एक्सिस पवन प्रवाह के लम्बवत होता है, तथा वह पृथ्वी के भी लम्बवत होता है (चित्र-20)। सर्वाधिक परिचित ऊर्ध्व-अक्षीय घूर्णक (रोटर) दो एक समान
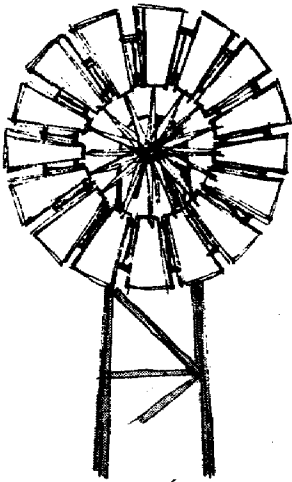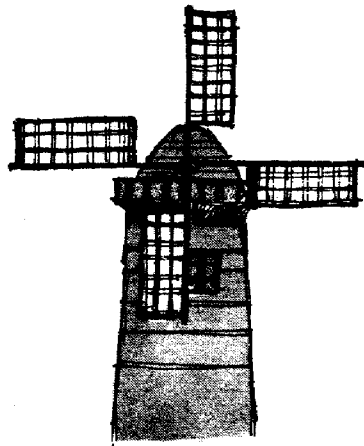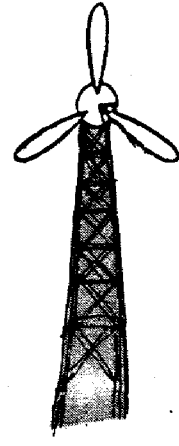
घूर्णकों के प्रकार

चित्र 18 क. उच्च बल आघूर्ण, प्रति मिनट कम परिक्रमण, उच्च क्षति;
ख. उच्च बल आघूर्ण, प्रति मिनट कम परिक्रमण, अकुशल फलक डिजाइन;
ग. कम बल आघूर्ण, प्रति मिनट उच्च परिक्रमण, तथा कार्यक्षम फलक डिजाइन।
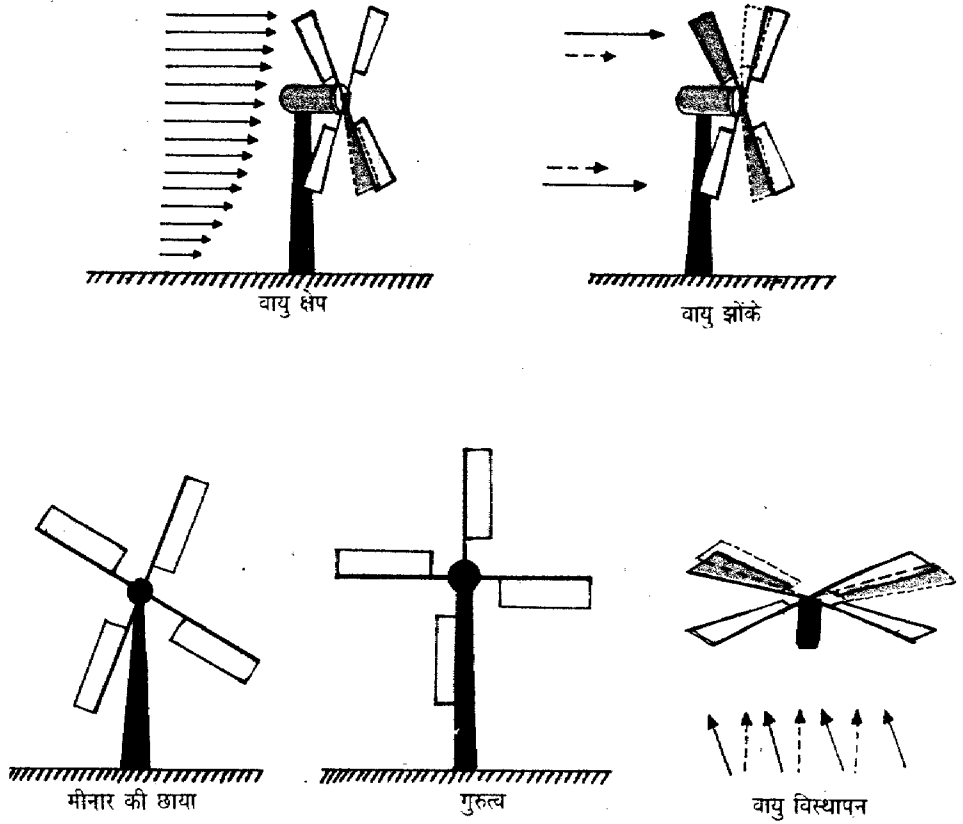
चित्र 19. घूर्णकों के गतिक प्रभार को उत्पन्न करने वाले विभिन्न कारक।

अर्ध-बेलनाकारक आकृतियों से निर्मित होता है जिनका अक्ष ऊर्ध्व होता है। उनके चारों ओर पवन प्रवाह व पवन दबाव के क्षेत्र अर्ध-बेलनाकारक आकृतियों में चित्र-21 में दर्शाये गये हैं। उस समय जब कि स्थिति चित्र-21 क. में दर्शायी गयी स्थिति के समान होती है, उस दशा में अर्ध-बेलनाकारक 'क' के पीछे कम दबाव वाला क्षेत्र बन जाता है, जिससे वह पवन के विपरीत बढ़ता है, जिसके कारण मरोड़ने वाला बल आघूर्ण (टॉर्क) कम हो जाता है। परंतु यदि दोनों अर्ध-बेलनाकारकों के मध्य एक वायुमार्ग है, जैसा कि चित्र-21 ख. में दर्शाया गया है, तो उस स्थिति में अर्ध-बेलनाकारक 'क' के पीछे वायु का दबाव क्षेत्र घटने के स्थान पर बढ़ जाता है, जिसके परिणामस्वरूप बिना वायुमार्ग वाले अर्ध-बेलनाकारकों की अपेक्षा इस दूसरी स्थिति में मरोड़ने वाला
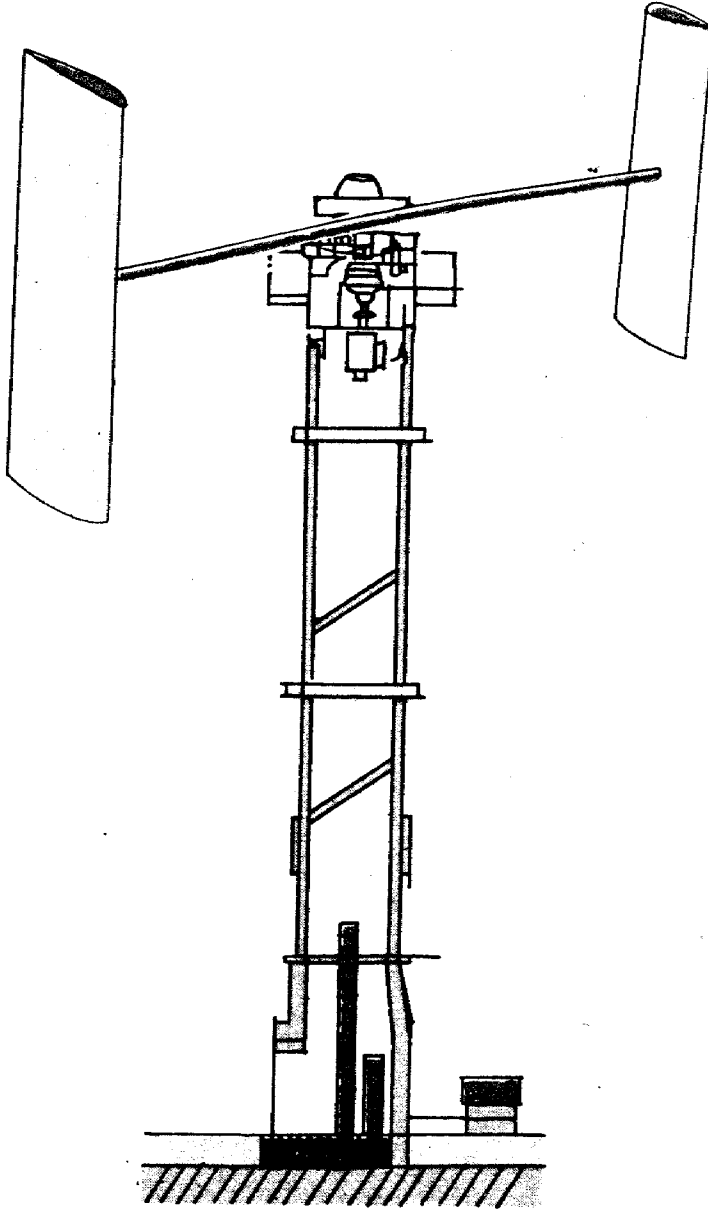
चित्र 20. एक उच्च गतिक, संशोधित ऊर्ध्व-अक्षीय पवन चक्की।

आघूर्ण बल या टॉर्क लगभग तीन गुणा अधिक बढ़ जाता है। इस ऊर्ध्व-अक्षीय घूर्णक का विकास फिनलैंड के एक अभियंता, सेवोनियस द्वारा (1931) किया गया था, और तब से यह लघु पवन-शक्ति संयंत्रों में प्रचुरता से प्रयोग में लाया जा रहा है (चित्र-22)।

एक फ़्रांसीसी अभियंता, डैरियस ने (1931) एक अन्य प्रकार के ऊर्ध्व-अक्षीय घूर्णक की रचना की, जिसका एक आधुनिक रूप चित्र-23 में दर्शाया गया है। इसमें लचीली धातु-पट्टियां केटेनरी के आकार में लगकर घूर्णक फलकों का निर्माण करती
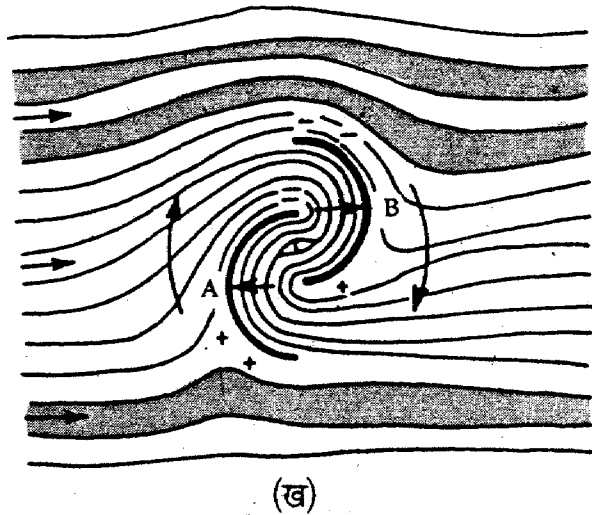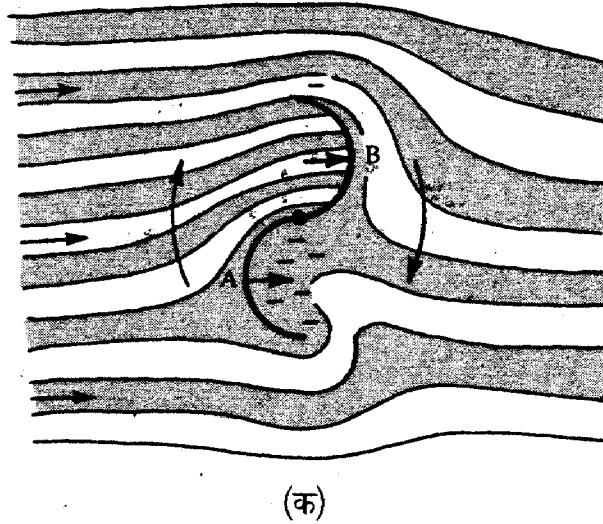
चित्र 21. अर्ध-बेलनाकारकों पर और उनके चारों ओर वायु-प्रवाह और वायु-दाब के पैटर्न: (क) अर्ध-बेलनाकारक के पीछे का कम दाब का क्षेत्र है, क्योंकि यह वायु की विपरीत दिशा में प्रवाहित है; (ख) अर्ध-बेलनाकारक के मध्य का वायु-मार्ग बेलन 'A' के पीछे दाब को बढ़ाता है, जिसके कारण आघूर्ण बल (टॉर्क) बिना वायु-मार्ग के तीन गुणा अधिक हो जाता है।

चित्र 22. सेवोनियस घूर्णक

घूर्णक का फलक

घूमने वाला स्तंभ

घिर्री

निचली बियरिंग

आधार प्लेट
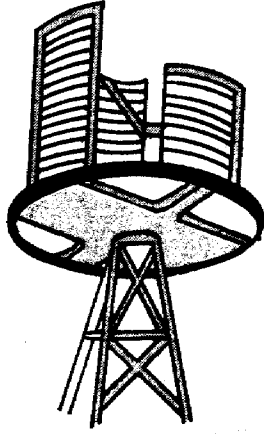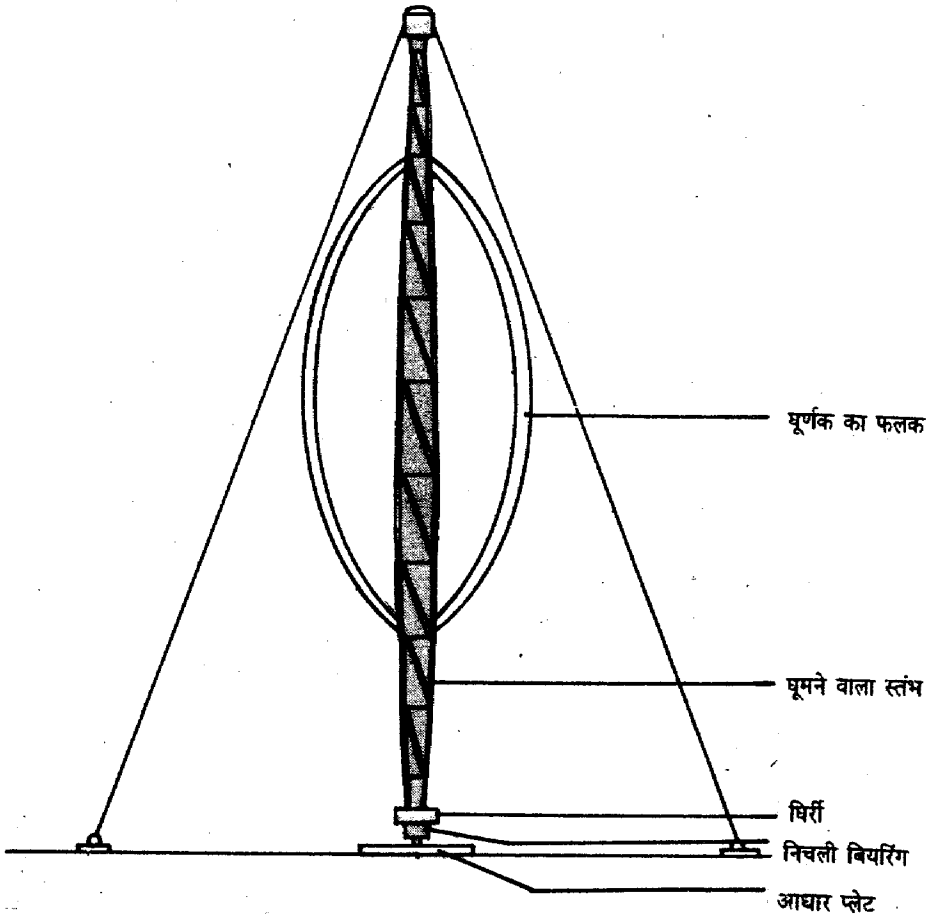
चित्र 23. एक ऊर्ध्व-अक्षीय घूर्णक तथा उसके विभिन्न घटक।

हैं। एक निश्चित पवन गति पर यह इकाई सेवोनियस घूर्णक से कार्यक्षम है। दुर्भाग्यवश, डैरियस घूर्णक (रोटर) उच्च पवन गति में भी स्वयं चालू नहीं होता।

विशाल पवन चालित टर्बाइनों के जेनरेटरों के घूमने की गति को, जब वे अपनी निर्धारित गति से प्रचालित हों, घूर्णक के फलकों की पिच को बदलकर नियंत्रित किया जा सकता है। जेनरेटर की अधिकतम कार्यकारिता के लिए घूर्णन की काफी अधिक चाल (लगभग 1,800 चक्कर प्रति मिनट) की आवश्यकता होती है। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि घूर्णक की चाल को अत्यधिक रूप से बढ़ा दिया जाये। इसके लिए जिन संचारण (ट्रांसमिशन) विकल्पों का उपयोग किया जाता है वे हैं ऐसी यांत्रिक प्रणालियां, जिनमें स्थिर अनुपाती गियर, बेल्टों तथा चेन का प्रयोग होता हो (अकेले ही, या मिश्रित रूप में), या वे हाइड्रॉलिक प्रणालियां, जिनमें द्रव-पम्प तथा मोटर प्रयुक्त होते हैं।
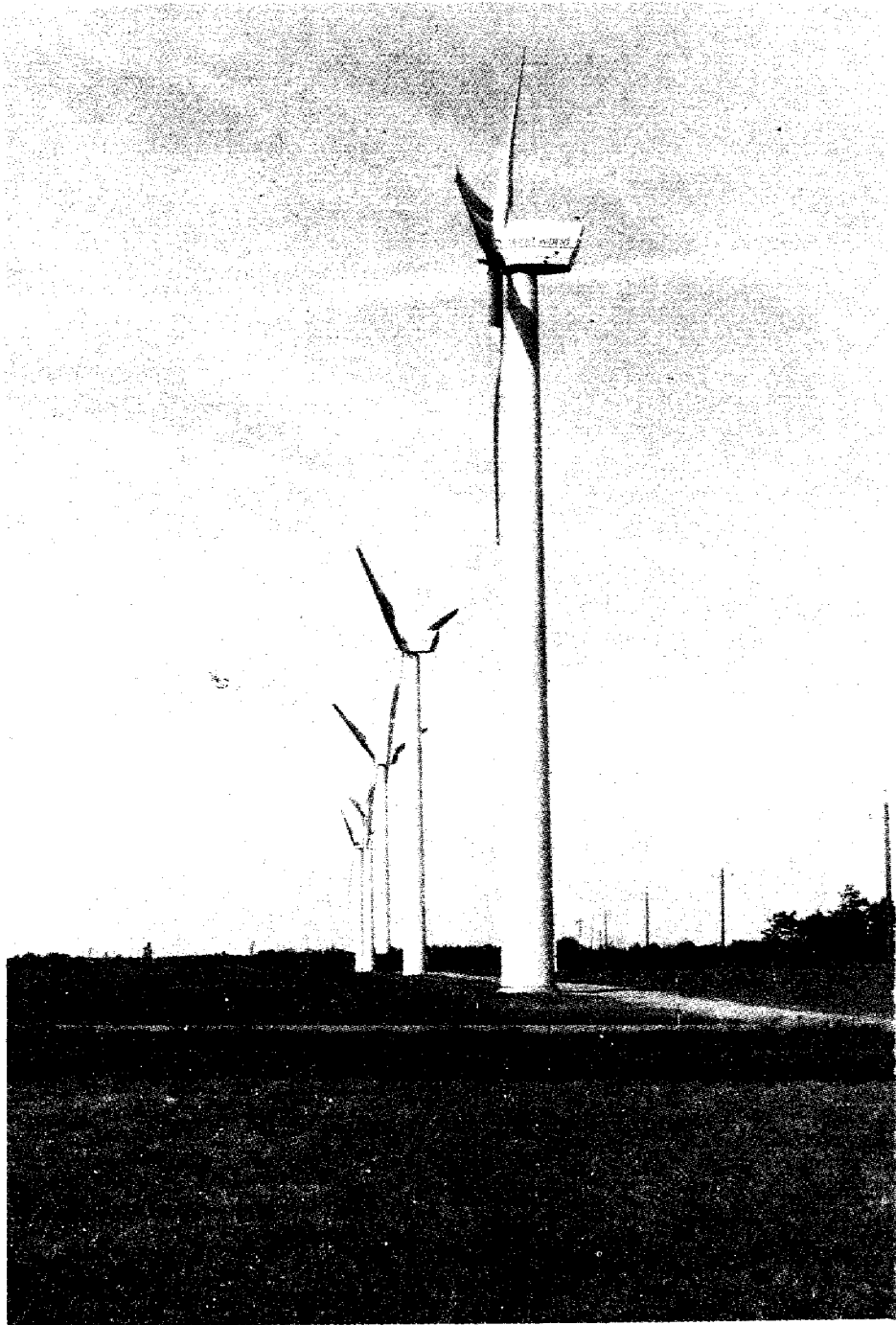
प्लेट क. पवन ऊर्जा संयंत्रों को अधिक स्थान की आवश्यकता नहीं होती। इन्हें मीनार की नींव तक खेतों में भी स्थापित किया जा सकता है।
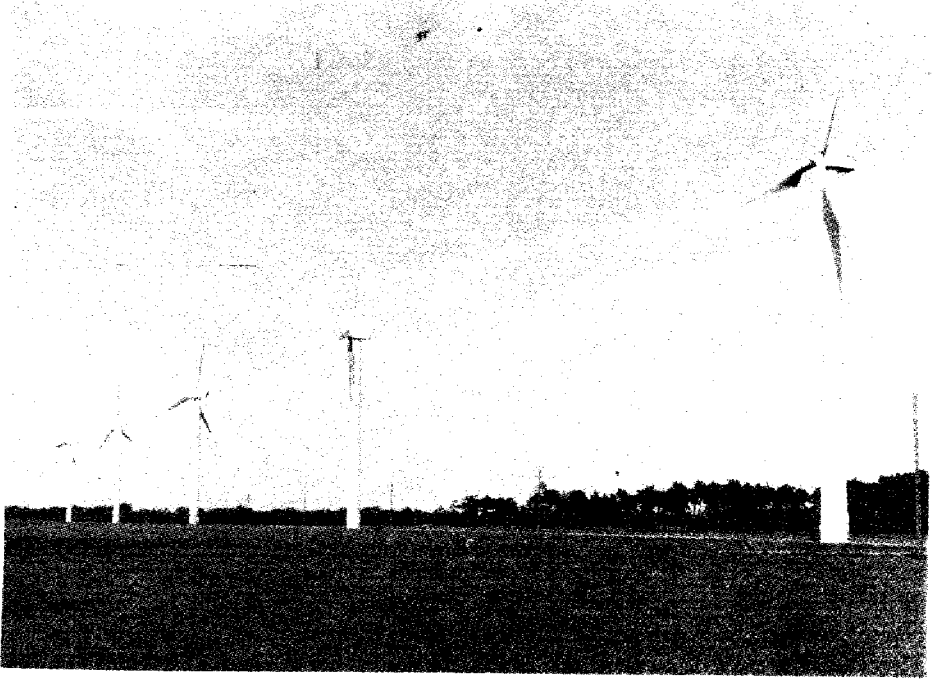
प्लेट ख. उपलब्ध ऊर्जा तथा पवन की गति में महत्वपूर्ण संबंध होने के कारण टर्बाइनों को इस प्रकार लगाया जाना चाहिए कि इन्हें पवन का अबाध व उन्मुक्त प्रवाह मिल सके।
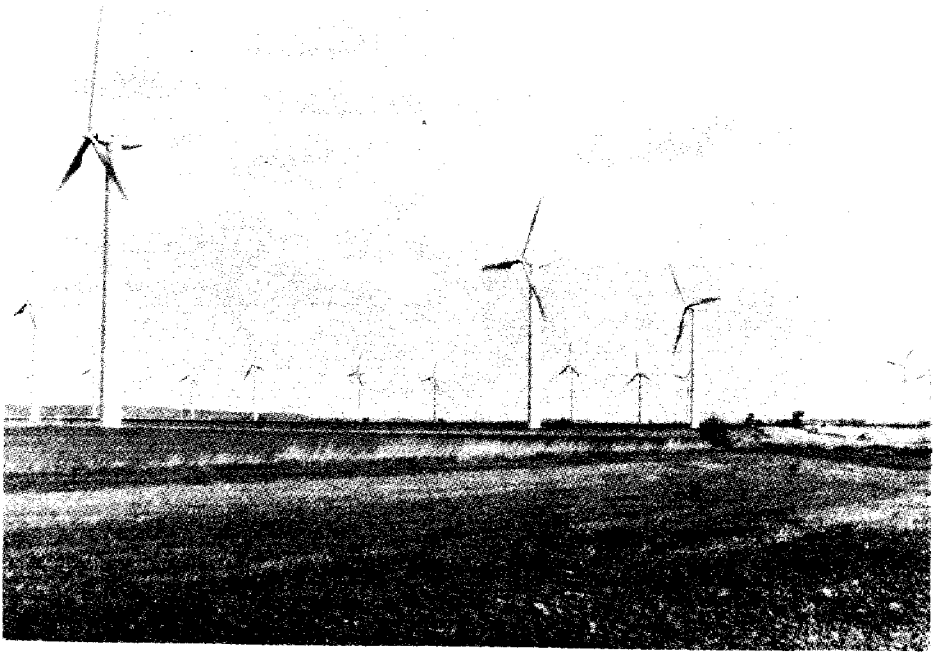
प्लेट ग. डेनमार्क की कुल ऊर्जा खपत का 1.5 प्रतिशत पवन ऊर्जा की खपत है। यहां पवन टर्बाइनों की संख्या लगभग 3200 है।
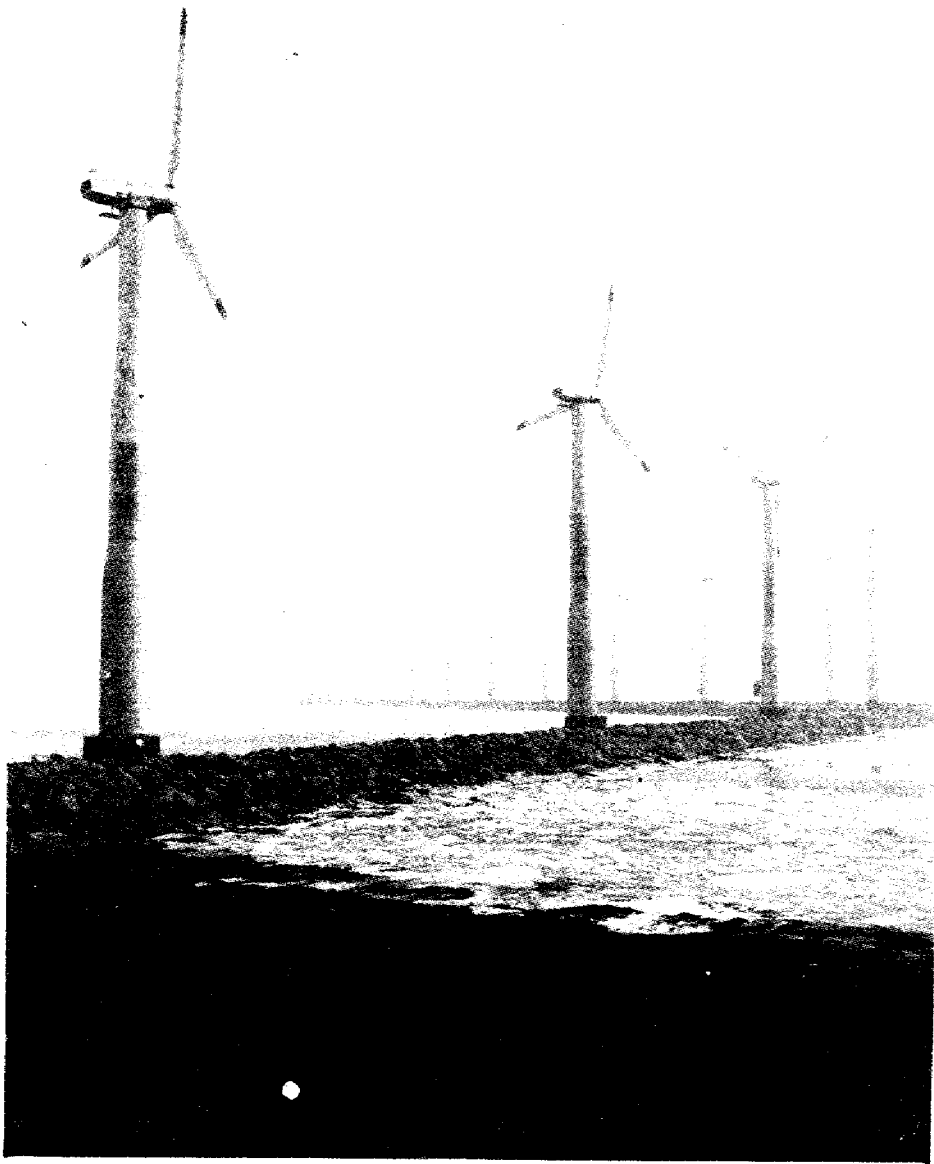
प्लेट घ. डेनमार्क के एबेलटफ्ट का एक अपतटीय पवन ऊर्जा फार्म, जिसे जून 1986 में शुरू किया गया था। इसे विश्व का सर्वप्रथम अपतटीय पवन ऊर्जा फार्म कहा जाता है। इसमें सोलह 55 किलोवाट की तथा एक 100 किलोवाट की नार्डटैंक पवन टर्बाइनें लगी हैं।
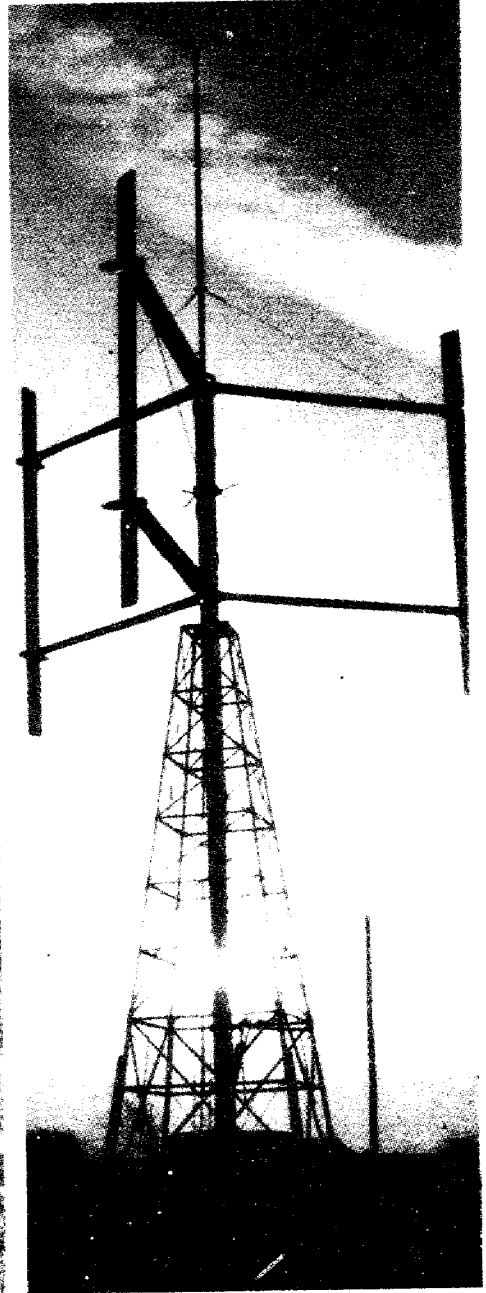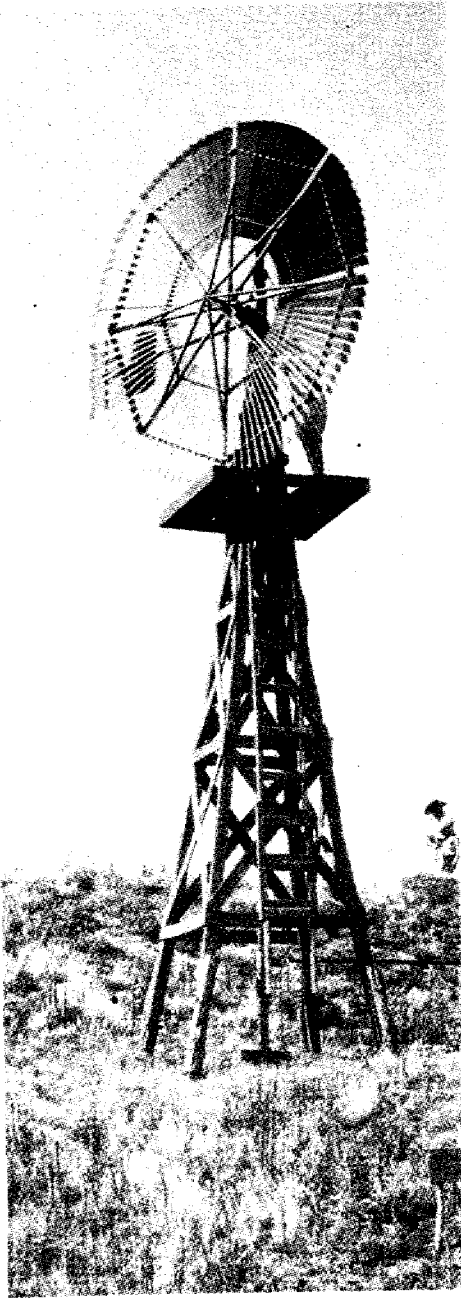
प्लेट च. ल्युबॉक स्थित टेक्सास प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के एक अद्भुत बाह्य संग्रहालय में एक पवन चक्की को एक गौरवपूर्ण स्थान दिया गया है। इस संग्रहालय में पूर्ववर्ती निवासियों की जीवन शैली तथा परिवेश को परिरक्षित किया गया है।

प्लेट छ. कोलोरैडो स्थित 'एनर्जी रिसर्च सेंटर' विभाग द्वारा परीक्षण हेतु निर्मित एक गायरोमिल, जो कि पवन चक्की की एक नयी संकल्पना है। यह पवन चक्की 38 मीटर ऊंची है तथा इसमें 13 मीटर के तीन खड़े फलक हैं। यह चक्की पंद्रह आवासीय भवनों के लिए आवश्यक विद्युत उत्पन्न कर सकती है, अथवा खेतों की सिंचाई के लिए सीधे ही गहरे नलकूपों से पानी निकाल सकती है।

3

पवन ही क्यों?

शताब्दियों से मानव ऊर्जा के स्रोत के रूप में ऊर्जा रूपांतरण प्रणालियों का उपयोग करता आ रहा है। वैज्ञानिकों और अभियंताओं ने बड़ी पवन टर्बाइनें बनाने से पहले छोटे-छोटे पवन ऊर्जा यंत्रों पर प्रारंभिक प्रयोग किये। तथापि, 1960 के प्रारंभिक काल में शक्ति उत्पादन में पवन ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत के रूप में प्रयुक्त किये जाने की दिशा में, अन्य सस्ते व सुगमता से उपलब्ध शक्ति-स्रोतों के कारण, रुझान कुछ कम हो गया। उस युग के जीवाश्मीय ईंधन तंत्रों की तुलना में पवन ऊर्जा लागत की दृष्टि से प्रभावी नहीं पायी गयी। इसके अतिरिक्त, इस दिशा में किये जाने वाले प्रयास सामान्तया व्यक्तिगत वित्तीय संसाधनों पर आधारित थे, तथा इस दिशा में सतत् शोधकार्य एवं विकासात्मक प्रयासों का भी अभाव रहा। यह केवल 1970 के दशक में स्पष्ट हुआ कि जीवाश्मीय ईंधन स्रोतों का नवीकरण नहीं हो सकता है ; इनकी आपूर्ति में व्यवधान पड़ सकता है; तथा नाभिक ऊर्जा स्रोत इतने विश्वसनीय तथा कम खर्च वाले नहीं है जैसा कि पहले आशा की गयी थी। ऊर्जा की आवश्यकता में वृद्धि,ईंधन की बढ़ती हुई कीमतें, ऊर्जा भंडारों का तीव्रता से दोहन तथा विदेशी स्रोतों पर निर्भरता आदि ने वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों के विकास पर ध्यान देने के लिए विवश कर दिया। विश्व के औद्योगिक देश पुनः यह निर्णय लेने हेतु विवश हुए कि ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत के रूप में पुनः पवन ऊर्जा का विकास अब पहले से कहीं बड़े पैमाने पर किया जाये। आज, पवन चालित संयंत्र कई ऐसे देशों में, जिनके पास अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दूसरे देशों की ओर देखने के अतिरिक्त कोई और मार्ग नहीं है, ऊर्जा संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ऊर्जा के पूरक के रूप में एक प्रमुख स्थान पा चुके हैं।

आज पवन ऊर्जा का महत्व दिन-प्रतिदिन क्यों बढ़ रहा है, इसे समझने के लिए हमें इस तंत्र के लाभ व हानि दोनों को ही तुलनात्मक दृष्टि से देखना होगा। इसमें निम्नलिखित विवरण को ध्यान से देखने पर यह ज्ञात होगा कि इसमें हानि की

अपेक्षा लाभ कई गुणा अधिक हैं।

1. ***यह साफ-सुथरी है*** : वायु का ऊर्जा उत्पादन हेतु उपयोग करने में न तो किसी भी प्रकार के प्रदूषण की समस्या, या अम्लीय वर्षा की समस्या, या खानों के अपवाह या विषाक्त प्रदूषक पदार्थो जैसी कोई समस्या है, और न ही इसके कारण हेक्टैयरों तक फैली भूमि क्षतिग्रस्त होती है। वास्तव में मानव की पर्यावरणीय आवश्यकताओं की पूर्ण आपूर्ति पवन ऊर्जा रूपांतरण तंत्रों द्वारा हो जाती है। कार्बन-डाईआक्साइड के उत्सर्जन को कम करने के लिए उपलब्ध कुछेक तकनीकी विकल्पों में पवन ऊर्जा भी एक है। चूंकि इसमें गैसीय प्रदूषकों के उत्सर्जन जैसी कोई समस्या नहीं है जो कि ग्रीनहाउस प्रभाव को उत्पन्न करके पर्यावरणीय समस्याओं को बढ़ायें, अतः विद्युत उत्पादन हेतु पवन ऊर्जा ही सबसे अधिक स्वीकृत स्रोतों में से एक है। यह नवीकरण योग्य ऊर्जा ही विश्वव्यापी उष्णता तथा अम्लीय वर्षा से संघर्ष कर सकती है।

2. ***यह असमाप्य है*** : पवन अथवा वायु सुगमता से उपलब्ध है तथा न समाप्त होने वाली है, जब कि जीवाश्मीय ईंधन सीमित है। हालांकि और अधिक जीवाश्मीय ईंधनों की खोज की दिशा में सतत गवेषण कार्य चल रहा है, परंतु विश्व के औद्योगिक तथा विकासशील देशों की निरंतर बढ़ती ईंधन की आवश्यकता निश्चित रूप से आने वाले भविष्य में इन उच्च श्रेणी के ईंधन स्रोतों को समाप्त कर ही देगी। इस समस्या से निपटने के लिए, पवन ऊर्जा ही एकमात्र संभावित विकल्प है, जो कि नवीकृत भी होता रहता है। सूर्य की विकिरित ऊर्जा से पवन ऊर्जा सतत रूप से नवीकृत होती रहती है और इसका दोहन सरलतापूर्वक किया जा सकता है।

3. ***इसकी आपूर्ति असीमित है*** : पवन निशुल्क तथा प्रचुरता में उपलब्ध है, सरलता से प्राप्य है, समाप्त होने वाली नहीं है तथा इसकी आपूर्ति भी निर्बाध है। पवन अथवा वायु पर किसी भी देश या वाणिज्यिक प्रतिष्ठान का एकाधिकार नहीं है, जैसा कि जीवाश्मीय ईंधनों, यथा तेल, गैस, या नाभिक ईंधनों, जैसे यूरेनियम आदि, के साथ है। चूंकि ऊर्जा की मांग सतत रूप से बढ़ती ही जायेगी, इसलिए कच्चे तेल के बढ़ते हुए मूल्यों के साथ निश्चित रूप से पवन ऊर्जा ही एकमात्र आकर्षक विकल्प प्रस्तुत करती है।

4. ***यह सुरक्षित है*** : पवन ऊर्जा संयंत्रों का परिचालन सुरक्षित है। आधुनिक व उन्नत माइक्रोप्रोसेसर्स के प्रयोग से समस्त संयंत्र पूर्णतः स्वचालित हो गये हैं तथा संयंत्र के परिचालन के लिए अधिक श्रमिकों की आवश्यकता नहीं रह गयी है। निर्माण तथा रखरखाव की दृष्टि से भी ये पूर्णतः सुरक्षित हैं। यह बात तापीय ऊर्जा संयंत्रों अथवा नाभिकीय ऊर्जा संयंत्रों पर लागू नहीं होती। आधुनिक पवन संयंत्रों में प्रयुक्त

प्रभावी सुरक्षा यांत्रिकी से यहां तक संभव हो गया है कि इन्हें सार्वजनिक स्थलों पर भी थोड़ी सी क्षति अथवा बिना किसी क्षति के स्थापित किया जा सकता है।

5. ***पवन प्रणाली के लिए अधिक स्थान की आवश्यकता नहीं*** : पवन चालित प्रणाली के लिए तुलनात्मक रूप में कम स्थान की आवश्यकता होती है, और इसे हर उस स्थान पर, जहां वायु की स्थिति अनुकूल हो, लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए इसे पहाड़ी के शिखर पर, समतल सपाट भू-प्रदेश, वनों तथा मरुस्थलों तक में लगाया जा सकता है। संयंत्र को अपतटीय क्षेत्रों तथा छिछले पानी में भी लगाया जा सकता है। यदि पवन संयंत्र को कृषि भूमि में भी लगाया जाता है तो मीनार के आधार स्थान तक खेती की जा सकती है।

6. ***इनका शीघ्र निर्माण किया जा सकता है*** : पवन चक्की शृंखलाओं में अनेकों अपेक्षाकृत छोटी-छोटी इकाइयां होती हैं। इन्हें सरलता व शीघ्रता से समूहों में बनाया जा सकता है, जिसके परिणामस्वरूप इनकी योजना बनाने में लचीलापन आ जाता है। किसी भी पवन चक्की फार्म के पूरा होने के पहले ही निवेशित पूंजी अधिक शीघ्रता से वापस मिलने लगती है। मांग के बढ़ने के साथ-साथ, जब भी आवश्यकता अनुभव हो, नयी इकाइयां जोड़ी जा सकती हैं। इन्हें एक ही स्थान पर, समूह के रूप में या संपूर्ण देश के क्षेत्रों में बिखराकर लगाया जा सकता है।

7. ***इनमें रखरखाव की कम आवश्यकता होती है*** : चूंकि यह पवन चालित संयंत्र सरल व परिचालन में आसान होते हैं, अतः अन्य विकल्पों की तुलना में इनके रखरखाव की आवश्यकता कम होती है।

8. ***पवन ऊर्जा कम खर्चीली है*** : चूंकि वायु बिना मूल्य उपलब्ध है, इसलिए इसमें ईंधन के मूल्यों में वृद्धि के साथ मुद्रास्फीति का कोई भी जोखिम नहीं है। इस प्रकार पवन ऊर्जा धन तथा ईंधन दोनों ही रूपों में बचत करती है। अतः पवन ऊर्जा मूल्यप्रभावी है। आज विश्व के कई क्षेत्रों में, जहां वायु के स्रोत केंद्रित हैं, वहां पवन ऊर्जा तेल चालित तथा नाभिकीय - शक्ति से उत्पादित विद्युत को कड़ी चुनौती दे रही है, क्योंकि परम्परागत ऊर्जा स्रोतों के विकास की लागत जहां दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है, वहीं पवन ऊर्जा की लागत तीव्रता से गिर रही है। वायु चालित टर्बाइनों की दिनों-दिन बढ़ती हुई विश्वसनीयता से यह सिद्ध हो रहा है कि निकट भविष्य में अधिक से अधिक क्षेत्र ऊर्जा के अन्य रूपों की अपेक्षा पवन ऊर्जा को सबसे कम व्यय वाले आकर्षक विकल्प के रूप में अपनाएंगे।

उपर्युक्त सारे लाभों के बावजूद पवन ऊर्जा की कुछ अपनी सीमाएं भी हैं, जैसा कि निम्नलिखित से विदित होता है :

1. ***यह प्रणाली महंगी तथा परिवर्तनशील है*** : पवन चालित संयंत्र महंगे हैं और केवल वहीं लगाये जा सकते हैं जहां आवश्यकतानुरूप वायु उपलब्ध हो। उच्च पवन गति वाले क्षेत्र पहुंच से बाहर हो सकते हैं अथवा उच्च वोल्ट क्षमता वाली पारेषण लाइनों से दूर स्थित हो सकते हैं, जिससे पवन ऊर्जा के संचार में समस्या हो सकती है। साथ ही, विद्युत की आवश्यकता समय के अनुसार घटती-बढ़ती रहती है तथा विद्युत उत्पादन को मांग चक्र के अनुसार समायोजित करना होता है। चूंकि पवन शक्ति की मात्रा या गति में अचानक परिवर्तन हो सकते हैं, अतः यह भी संभव है कि मांग या आवश्यकता के समय यह उपलब्ध ही न हो। अतः सतत एक ही मात्रा में उपलब्ध न होने तथा अविश्वसनीय आपूर्ति के कारण पवन ऊर्जा की व्यावहारिक असुविधा ने इसके उपयोग को, उन्हीं क्षेत्रों तक सीमित कर दिया है जहां या तो विद्युत की सतत आपूर्ति की आवश्यकता नहीं है, या आवश्यकतानुरूप आपूर्ति हेतु एक अन्य स्थायी ऊर्जा विकल्प उपलब्ध है। विद्युत ऊर्जा का भंडारण कठिन एवं महंगा भी है, इसलिए पवन ऊर्जा का उपयोग किसी अन्य प्रकार की ऊर्जा के साथ-साथ अथवा गैर-वैद्युत भंडारण के साथ किया जा सकता है। पवन ऊर्जा का उपयोग जलविद्युत ऊर्जा जनित्रों के साथ करना अधिक लाभप्रद है क्योंकि जल का उपयोग ऊर्जा भंडारण के स्रोत के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है, और भूमिगत संपीडित वायु के भंडारण का उपयोग एक अन्य विकल्प है।

2. ***इसमें कुछेक पर्यावरणीय समस्याएं हैं*** : (क) *विद्युत चुंबकीय व्यवधान*—पवन उत्पादक संयंत्र विद्युत चुंबकीय संकेत वातावरण में प्रसारित करेंगे। क्षैतिज अक्ष वाले पवन चालित टर्बाइनों के घूमते हुए फलक (ब्लेड) दूरदर्शन संकेतों के दृश्य अंश विरूपित करके निकटवर्ती क्षेत्रों में उसके प्रसारण में व्यवधान उत्पन्न कर सकते हैं। संयंत्रों से दूरी बढ़ने के साथ-साथ यह व्यतिकरण कम हो सकता है, फिर भी यह परा-उच्च आवृत्ति (यू एच एफ) चैनलों को कई किलोमीटर की दूरी पर भी प्रभावित कर सकता है। अगर ब्लेड स्थिर भी हों, तो भी वायु में प्रसारित संकेत 'छद्म बिम्ब' (घोस्ट इमेज) उत्पन्न कर सकते हैं। इस समस्या को समुचित स्थल-चयन तथा माइक्रोवेव (सूक्ष्म तरंग) संपर्क के बीच 'दृष्टि रेखा' को बदल कर तथा प्रसारण केंद्रों की निकटता को घटाकर दूर किया जा सकता है। (ख) *शोर* : अनेक विकसित देशों में 'शोर' की समस्या को पवन ऊर्जा विकास के विरुद्ध हथियार के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। पवन चालित संयंत्र से शोर उत्पन्न होने के दो प्रमुख स्रोत हैं : यांत्रिकीय शोर जो कि घूमते हुए यांत्रिक एवं वैद्युतिक घटकों से उत्पन्न होता है, और जिसे उचित गियर-प्रणाली या ध्वनि-रोधक आच्छादन लगाकर कम किया जा सकता है। दूसरा कारण है सीटी जैसी वह आवाज जो फलकों के ऊपर वायु के प्रवाहित होने से उत्पन्न वायुगतिकीय शोर है जिसकी

अलग-अलग आवृत्ति होती है। (ग) *वन्य जीवन* : अनेकों प्रकृति प्रेमी व्यक्तियों या क्लबों की यह आशंका है कि पवन चालित संयंत्रों की उपस्थिति प्रवासी पक्षियों तथा सामान्य पक्षियों को भयभीत करती है। परंतु आंकड़ों से यह अब सिद्ध हो चुका है कि 'पक्षी के टकराने' की घटनाएं निचली उड़ान के स्तर पर ही होती हैं, और इन पक्षियों की संख्या बहुत ही कम होती है। (घ) *सौंदर्य बोध* : निस्संदेह वायु चालित टर्बाइनों का प्राकृतिक दृश्यावली पर निश्चित रूप से कुछ दुष्प्रभाव पड़ता है और यह दृश्य प्रदूषण को जन्म देता है। जब बड़ी-बड़ी ऊंची मीनारें खड़ी की जाती हैं तो वे निश्चित रूप से दृश्यावली की सुरम्यता को प्रभावित करती हैं (विकसित देश इस दिशा में अधिक जागरूक हैं, जब कि विकासशील देशों में अधिकतर इसे प्रगति का चिह्न माना जा रहा है)। इन सबके अतिरिक्त, कम ऊंचाई पर वायुयान संचालन, राडार प्रसारणों तथा संचार के अन्य माध्यमों पर भी इसके दुष्प्रभाव पड़ सकते हैं।

पवन के विकल्प

यह अनुभव किया गया है कि पवन ऊर्जा, ऊर्जा की एक अच्छी पूरक है, या अन्य प्रकार की ऊर्जा का सबसे अच्छा विकल्प है। जहां निकटवर्ती क्षेत्र में ग्रिड आपूर्ति उपलब्ध है, वहां विद्युत शक्ति सरलता से प्राप्त की जा सकती है। जिन क्षेत्रों में वायु स्रोत समुचित रूप में उपलब्ध है, वहां पर वायु दशाओं के अनुसार पवन ऊर्जा के उपयोग को इस प्रकार समायोजित किया जा सकता है कि ऊर्जा का उत्पादन कम खर्च वाले विकल्प के रूप में सामने आये। जल विद्युत परियोजनाएं समुचित वर्षा वाले पहाड़ी क्षेत्रों के लिए उचित हैं, परंतु ऐसे सुदूरवर्ती क्षेत्रों के लिए वे पूर्णतः अनुपयुक्त हैं जहां पर आपूर्ति की मात्रा की कम आवश्यकता है। सौर ऊर्जा सेल (फोटोवोल्टाइक सेल) भी पवन ऊर्जा का एक विकल्प है। परंतु चूंकि सौर ऊर्जा सेल काफी महंगे हैं, इसलिए पवन ऊर्जा सस्ती पड़ती है। तथापि पवन चालित जनित्रों तथा सौर ऊर्जा संग्राहकों (फोटोवोल्टाइक कलेक्टर्स) की मिली-जुली प्रणाली अपनाने से बहुत ही अच्छे परिणाम प्राप्त हो सकते हैं।

लकड़ी भी एक अन्य उपलब्ध विकल्प है। परंतु अब इसे ऊर्जा स्रोत के रूप में नहीं माना जाता है।

यह अधिक अच्छा व उचित होगा कि केवल पवन शक्ति को ही ऊर्जा का अकेला स्रोत न मान कर, पवन ऊर्जा को किसी अन्य उपयुक्त व उपलब्ध ऊर्जा स्रोत के साथ मिलाकर मिश्रित रूप से उपयोग में लाया जाये। इससे ऊर्जा उत्पादन में पवन ऊर्जा का उपयोग अधिक प्रभावी ढंग से किया जा सकेगा।

4

पवन ऊर्जा के उपयोग

ऊर्जा के स्रोत के रूप में मानव-शक्ति के स्थान पर प्रयुक्त सबसे पुराने ऊर्जा स्रोत पवन ऊर्जा और जलविद्युत ही हैं। प्राचीन काल में, सागरों में जलयानों को धकेलकर आगे बढ़ाने तथा पवन चक्की को कूटने-पीसने की शक्ति देने के लिए पवन ऊर्जा का उपयोग किया जाता था। आज इसे विद्युत उत्पादन हेतु प्रयोग में लाया जा रहा है। जो यंत्र (मशीनें) पवन ऊर्जा को यांत्रिक ऊर्जा में परिवर्तित करती हैं, वे पवन चक्कियां कहलाते हैं, तथा जो यंत्र पवन ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित करते हैं वे पवन जनित्र या पवन ऊर्जा रूपांतरण तंत्र (विंड एनर्जी कन्वर्जन सिस्टम) कहलाते हैं। पवन चालित पम्प पानी खींचने में प्रयोग किये जाते हैं। घरेलू जलापूर्ति के काम आने वाले पवन चालित पम्पों को पवन इंजन कहा जाता है, ताकि उन्हें परम्परागत पवन चक्की से अलग समझा जा सके। ये चक्कियां 19वीं शताब्दी के अंत में प्रथम बार निर्मित अधिकांशतया लकड़ी की बनी होती थीं, तथा एक साधारण क्रैंक पद्धति से पम्पों को चालित करती थीं। कुछेक अन्य का प्रयोग नदी, तथा तालाबों से सिंचाई हेतु जल खींचने के कार्य हेतु इग्लैंड में किया जाता था। परंतु बिजली के प्रसार तथा ग्रामीण जलापूर्ति परियोजनाओं के कारण इनमें से अब केवल कुछ ही बची हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका, आस्ट्रेलिया तथा दक्षिण अफ्रीका में कम आबादी वाले क्षेत्रों में पवन चक्कियों द्वारा चालित कई हजार पम्प अब भी कार्यरत हैं। इनके मूल डिजाइन में एक पहिए पर संपीडित इस्पात के लगभग बीस फलक (ब्लेड) होते हैं। ये ब्लेड बाल बेयरिंग पर वाहित एक शैफ्ट पर लगे होते हैं। पहिये का व्यास लगभग 3 से. 4.5 मीटर तक होता है और पवन मिल का शीर्ष लगभग 7.5 मीटर ऊंची इस्पात की झिरीदार मीनार के ऊपरी सिरे पर लगा होता है। वायु दंड (विंड शैफ्ट) रिडक्शन गियर के द्वारा एक क्रैंक को घुमाता है। उसके साथ जुड़ी हुई छड़ें शीर्ष को चालित करती हैं। उसी से पम्प की नली भी जुड़ी होती हैं। यह विंड हैड या वायु चालित शीर्ष पूरा का पूरा मीनार के ऊपरी छोर पर स्वतंत्रतापूर्वक चारों ओर घूम सकता है।

एक कब्जेदार पुच्छ एक स्प्रिंग द्वारा इस पहिये को वायु की दिशा में बनाये रखता है। परंतु यह इस प्रकार बना होता है कि वायु की गति के 40 कि.मी. प्रति घंटा से अधिक होते ही यह पहिये को तुरंत विक्षेपित करके अति वेग से बचा लेता है। विंच से एक हल्की सी चेन जुड़ी रहती है जो कि पवन चक्की के निचले सिरे तक लटकी होती है। इससे कृषक पवन चक्की को घुमाकर पुच्छ को वायु की दिशा में समायोजित करके पवन चक्की को चालू कर सकता है।

शुष्क क्षेत्रों में, जहां जलस्तर भूमि के तल से लगभग 10 से 100 मी. नीचे तक होता है, पहले एक वैधछिद्र बनाकर उसके ऊपर पवन चक्की तथा नीचे एक प्रत्यागामी (रेसिप्रोकेटिंग) पम्प सिलिंडर लगाते हैं (चित्र-24)। यह पानी को एक भंडारण टेंक
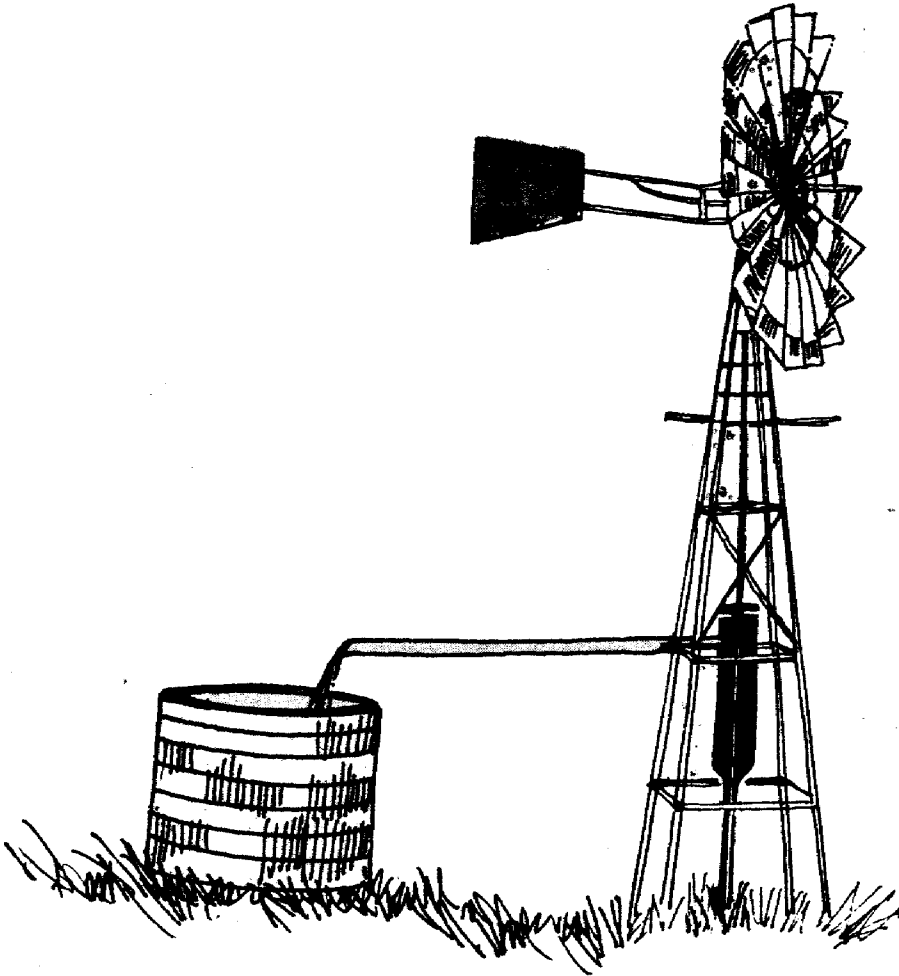
चित्र 24. दक्षिण अफ्रीका में पहाड़ी पर स्थापित एक पवन चालित पम्प जो अधिकतम वायुगति पर वायु ग्रहण करता है। भंडारण टेंक वायुरहित अवधि के लिए आवश्यक है।

में घरेलू उपयोग या अन्य उपयोगों हेतु इकट्ठा करता है।

पवन चक्की के पम्प की वास्तविक जल-अश्वशक्ति, यदि वायु की गति 40 कि.मी. प्रति घंटा हो, तो 0.5 अश्वशक्ति (375 वाट) के बराबर होती है। यह जल अश्वशक्ति एक इकाई समय में ऊपर उठाये गये पानी का भार, तथा जिस ऊंचाई तक पानी उठाया गया उसका गुणनफल है—न कि विंड शैफ्ट पर वायुचक्र द्वारा उत्पादित शक्ति।

मालवाहक जलयानों के लिए पवन शक्ति : वर्तमान में, केवल आनंद-यात्रा के जलयानों को छोड़कर पाल वाले जलयानों के शोध में एक विराम सा आया हुआ है और यह स्थिति सन् 1900 के प्रारंभ से ही है। विशाल पालयुक्त बड़े-बड़े जलयानों का निश्चित अंत तो प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति पर ही हो गया था। इसका कारण कम मूल्य वाले जीवाश्मीय ईंधन की उपलब्धि थी जिससे लगातार एक समान ऊर्जा विश्वसनीय रूप से प्राप्त होती थी और उसने जलयानों के आवागमन के सही समय के निर्धारण करने की प्रक्रिया को और अधिक उन्नत किया। यह अनुमान लगाया गया है कि आधुनिक ऊर्जायुक्त जलयानों की कुल प्रचालन लागत का लगभग 20 से 30 प्रतिशत व्यय केवल ईंधन पर ही होता है, जो कि संपूर्ण विश्व में तेल की कुल खपत का 5 से 8 प्रतिशत है। 1970 के दशक की अवधि में ऊर्जा की कमी ने पवन शक्ति चालित जलयानों के विषय में काफी रुचि उत्पन्न कर दी थी। जापान, जर्मनी तथा संयुक्त राज्य अमेरिका में पवन ऊर्जा की क्षमताओं पर शोध कार्यों को तेज कर दिया गया तथा कुछ प्रायोगिक जलयानों का निर्माण भी किया गया। पाल शक्ति ईंधन की बचत की दृष्टि से ही आकर्षक नहीं है, बल्कि यह महत्वपूर्ण पर्यावरणीय समस्याओं को भी जंन्म नहीं देती है। अनुमान लगाया गया है कि जलयानों में 10 से 20 प्रतिशत तक बंकर तेल की खपत में कमी करके, माल की ढुलाई की लागत में प्रतिवर्ष 5.5 अरब अमेरिकी डालर की बचत की जा सकती है। जलयानों हेतु पवन ऊर्जा के प्रयोग के पक्ष में एक और तथ्य यह है कि इस क्षेत्र में काफी जानकारी उपलब्ध है। सन् 1900 के प्रारंभ तक, पाल वाले पवन चालित जलयान विकास के काफी उन्नत चरण तक पहुंच चुके थे, और यह ज्ञान सरलता से पुनः प्राप्त किया जा सकता है। इसके साथ भूमि पर स्थित पवन यंत्रों की प्रौद्योगिकी को भी जोड़ा जा सकता है। भविष्य के पवन शक्ति चालित जलयान वर्तमान में उपलब्ध उन्नत सामग्री (जैसे पाल के लिए), पोतखोल (हल) को सड़ने से बचाने वाले रसायनों, सहायक वैद्युत, यांत्रिक तथा नियंत्रण उपकरणों आदि से लाभ उठा सकते हैं। साथ ही, ये मौसम की भविष्यवाणी एवं जलयान से तट तक की संचार व्यवस्था आदि के क्षेत्र में हुए विकास से भी लाभ

उठा सकते हैं। ये विकास अत्यधिक पवन दक्षता वाले मार्गों के निर्धारण आदि में अत्यधिक सहायक सिद्ध होंगे।

हैम्बर्ग, जर्मनी के इंस्टीट्यूट फ्यूर शिफबाउ द्वारा पाल वाले पवन शक्ति चालित जलयानों की प्रौद्योगिकी पर हाल ही में अत्यधिक अग्रणी शोध कार्य किया गया। विभिन्न प्रकार के हलों या पोतखोलों के डिजाइनों का परीक्षण वायु सुरंगों तथा टोविंग टैंकों में किया जा चुका है।

भावी पवन चालित जलयानों में रिगिंग (या वायु संग्राहकों की व्यवस्था) के संबंध में अनेकों विचारधाराएं हैं। नौसेना वास्तुशिल्पियों तथा समुद्र-विज्ञान अभियंताओं ने सर्वोत्तम विकल्प प्राप्त करने हेतु शताब्दी या उससे भी पहले के सर्वाधिक सफल पाल वाले जलयानों का अध्ययन किया है। हालांकि ये पुराने परीक्षित डिजाइनों के आधार पर बने नए डिजाइन उनसे लगभग पूर्णतया भिन्न हैं। कुछ डिजाइनों में घूमने वाले ऐसे मस्तूलों का विचार किया गया है जो संवेदकों से पूर्णतः सज्जित हों, तथा स्वचालित नियंत्रण प्रणालियों से लैस हों (चित्र-25)।

विद्युत उत्पादन में पवन शक्ति : पवन ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित करके विभिन्न उद्देश्यों के लिए काम में लाया जा सकता है। पवन चालित टर्बाइनों के प्रयोग से इसमें निहित क्षमता तथा उपयोग की सरलता के कारण ऊर्जा उत्पादन क्षेत्र में क्रांति आ गयी है। निकट भविष्य में विद्युत की खपत में अभूतपूर्व वृद्धि होना निश्चित है और उस स्थिति में विश्व की विद्युत मांग को पूरा करने के लिए पवन ऊर्जा ही एकमात्र आदर्श शक्ति स्रोत होगी। आवासीय, कृषि संबंधी, वाणिज्यिक तथा औद्योगिक
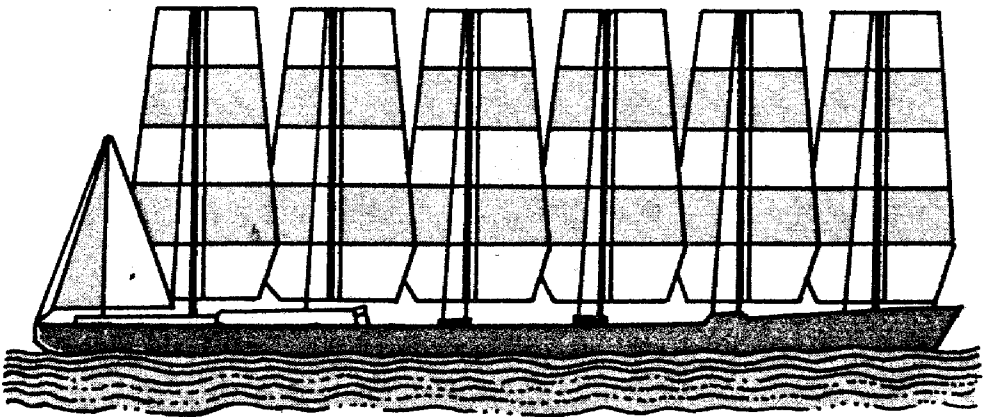
चित्र 25. मिशिगन विश्वविद्यालय के इस डिजाइन में घूर्णी मस्तूलों की बाजाए त्रिपाद मस्तूल दिखाए गए है।

आवश्यकताओं की आपूर्ति हेतु बड़े पैमाने पर पवन ऊर्जा संयंत्रों की स्थापना निश्चित रूप से वांछित विद्युत शक्ति उपलब्ध कराने हेतु अधिक संभाव्य है। हालांकि बड़े पैमाने पर विद्युत उत्पादन हेतु निश्चित रूप से बड़ी संख्या में पवन चालित टर्बाइनों की आवश्यकता होगी। एक छोटा बैटरी चालित पवन जनित्र यदि भली-भांति अभिकल्पित हो, उसका रखरखाव ठीक हो और उसे एक समान वायु वेग वाले क्षेत्र में आवश्यकतानुसार ऊंचे स्तंभ पर लगाया जाये तथा उसे उत्पादित विद्युत के उपभोग क्षेत्र के काफी निकट स्थापित किया जाए तो वह काफी सफल हो सकता है।

यह सामान्तया स्वीकार किया जाता है कि बड़ी इकाइयों के लिए पवन शक्ति का सर्वोत्तम विकास प्रेरण जनित्रों को प्रोपेलर प्रकार की पवन चक्कियों की शृंखला द्वारा चलाकर, और उस ऊर्जा को एक नेटवर्क में संचित करके किया जा सकता है।

इस प्रकार के पवन चक्की फार्मों में बड़ी संख्या में पवन चालित टर्बाइनों को अंततः संपर्कित रूप से एक सामूहिक प्रणाली के रूप में स्थापित किया जा सकता है। इस प्रकार पवन फार्म का परिचालन तथा नियंत्रण, कंप्यूटरीकृत, मानिटरिंग सिस्टम द्वारा एक केंद्रीय नियंत्रण कक्ष से किया जायेगा। विभिन्न आकारों तथा क्षमताओं के पवन ऊर्जा फार्म भारत सहित अनेकों देशों में पहले से ही प्रयुक्त हो रहे हैं। डेनमार्क, नीदरलैंड, इंग्लैंड तथा संयुक्त राज्य अमेरिका में अधिक जटिल तंत्रों वाले संयंत्र कार्यरत हैं। सर्वाधिक बड़े पवन फार्म संयुक्त राज्य अमेरिका के केलिफोर्निया क्षेत्र में स्थित हैं, जहां पर विभिन्न क्षमताओं वाली 18,000 से भी अधिक पवन टर्बाइनें कार्यरत हैं।

पवन चालित टर्बाइनें उन स्थानों पर लगाना वस्तुतः लाभदायक है जो बहुत दूर हों, अलग-थलग हों और जहां ग्रिड लगाना या तो संभव नहीं है, या उस पर अत्यधिक लागत आती है, यथा द्वीपों अथवा ध्रुवीय क्षेत्रों में। इन पवन चालित टर्बाइनों को सामान्यतया अन्य जेनरेटिंग सिस्टम के साथ, जैसे कि डीजल या विद्युत फोटोवोल्टाइक (सौर ऊर्जा) संयंत्रों के साथ पूरक के रूप में भी संबद्ध किया जाता है।

वर्तमान समय में विश्वव्यापी विद्युत ऊर्जा उत्पादन क्षेत्र में पवन ऊर्जा का योगदान काफी कम है। तथापि, अब जबकि विश्व के विभिन्न देशों की सरकारें जीवाश्मीय ईंधन (तेल, प्राकृतिक गैस तथा कोयला) और परमाणु ऊर्जा के वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों की खोज में लगी हुई हैं, कोई संदेह नहीं है कि पवन ऊर्जा के प्रयोग तथा शोधकार्यों हेतु निकट भविष्य में बड़ी-बड़ी धनराशि जुटाई जायेगी। यह

इसलिए भी संभव है कि जीवाश्मीय ईंधन जलाने वाले विद्युत केंद्रों द्वारा उत्सर्जित कार्बन डाइआक्साइड के ग्रीनहाउस प्रभावों के प्रति बढ़ती हुई चिंता तथा जागरूकता भी इस दिशा में किये जा रहे प्रयासों को और अधिक प्रेरणा तथा गति प्रदान करेगी।

5

पवन संसाधनों का आकलन

हालांकि पवन निशुल्क उपलब्ध है, परंतु उससे शक्ति के उत्पादन के साधन निशुल्क नहीं हैं। पवन यंत्रों तथा उन्हें लगाने और उनकी सतत देखभाल व रखरखाव के लिए खर्च करना पड़ता है। अतः किसी भी स्थल पर पवन यंत्र लगाने से पहले उस स्थल विशेष की पवन-क्षमता के संबंध में गंभीरतापूर्वक विचार करना आवश्यक है।

चूंकि प्राप्त ऊर्जा पवन की गति की समानुपाती होती है, अतः पवन यंत्रों को ऐसे स्थान पर ही लगाना चाहिए, जहां कोई रुकावट न हो तथा जहां पर पारम्परिक ऊर्जा उत्पादन अधिक खर्चीला न हो। इन सभी कारकों का समेकित स्वरूप संयुक्त राज्य अमेरिका के केलिफोर्निया में दृष्टिगत होता है। वर्ष 1990 के अंत में कहा गया कि वहां पर 1600 मेगावाट (एक बड़े नाभिकीय संयंत्र की उत्पादन क्षमता लगभग 1100 मेगावाट होती है) शक्ति का उत्पादन होता है तथा इसके लिए लगभग 16,000 पवन जेनरेटर कार्यरत हैं। इनमें से अधिकांश पवन चालित यंत्र पर्वतों के दर्रों में पवन फार्मों के रूप में समूहबद्ध हैं। उत्पादित वायु ऊर्जा, वायु की गति के घन के अनुसार परिवर्तित होती रहती है। वायु की संहति (m) के साथ वायु की गति (v) तथा एक इकाई समय में एक क्षेत्र (A) से प्रवाहित घनत्व (d) जो कि एक परम्परागत क्षैतिज अक्ष वाली वायु टर्बाइन के फलकों द्वारा प्रवाहित होती है, dAv है। अतः इस वायु संहति की गतिज ऊर्जा को निम्न रूप से दर्शाया जा सकता है—$^1/_2\, mv^2 = {}^1/_2 d Av^3$। इस प्रकार यह बहुत ही महत्वपूर्ण है कि वायु फार्म वहीं स्थापित किए जाएं जिन क्षेत्रों में वायु की औसत प्रवाह गति अत्यधिक हो। भूमि की ऊंचाई के बढ़ने के साथ-साथ वायु की गति भी बढ़ती जाती है। यह खुले क्षेत्रों (यथा सागरों, बड़ी झीलों आदि) में भी अधिक होती है। यह भी देखा गया है कि छोटे-छोटे व्यवधान यथा भवन, वृक्ष, बाड़ तथा इसी प्रकार की अन्य संरचनाएं वायु प्रवाह के अवरोधक का कार्य करती हैं, जिनसे वायु प्रवाह में विक्षोभ उत्पन्न होता है जो कि वायु चालित यंत्रों की दक्षता को प्रभावित करता है। अतः पवन चक्की का स्थल अवरोधों से दूर होना

चाहिए तथा ऊंची मीनारों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

पवन की एक विशिष्टता उसकी त्वरित परिवर्तनशीलता है। पवन की दशा में समय, स्थान तथा मौसम के अनुसार परिवर्तन होता है। अतः पवन यंत्र का ऊर्जा उत्पादन भी उसी प्रकार प्रभावित होता रहेगा। पवन ऊर्जा के आकलन का एक और अधिक विश्वसनीय उपाय यह है कि ज्ञात स्थल पर वार्षिक औसत पवन वेग की गणना की जाये। वार्षिक औसत वायु वेग का उपयोग किसी विशिष्ट पवन ऊर्जा यंत्र द्वारा औसत वार्षिक ऊर्जा उत्पादन के लिए आकलन हेतु किया जा सकता है, अर्थात् 3 मीटर/सैकेंड से कम वार्षिक औसत पवन वेग वाले स्थानों को उचित स्थान के रूप में नहीं चुना जाता। 3 से 4 मीटर/सैकेंड से अधिक वार्षिक औसत पवन वेग वाले स्थानों को उनके उपयोग तथा अन्य उपलब्ध ऊर्जा साधनों की तुलनात्मक लागत को देखते हुए संभावित स्थान माना जा सकता है। यह देखा गया है कि पवन ऊर्जा के समुचित विकास हेतु 6.5 मीटर/सैकेंड से 8 मीटर/सैकेंड औसत पवन गति वाले स्थान आदर्श स्थल हैं।

तथापि, यह सामान्य सी बात है कि किसी स्थल विशेष से संबंधित मौसम विज्ञान के आंकड़े बने बनाए रूप में उपलब्ध नहीं होते हैं। निकटवर्ती मौसम विज्ञान केंद्रों से पवन संब्रंधी कुछ आंकड़े उपलब्ध हो सकते हैं। चपटे, सपाट मैदानी क्षेत्र में इस प्रकार के तीन या चार निकटवर्ती (50 कि.मी. की त्रिज्या में) मौसम विज्ञान केंद्र औसत पवन गति का एक मोटा अनुमान लगाने में सहायक हो सकते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में पवन गति और अधिक स्थान सापेक्ष होती है तथा अधिक विस्तार में विश्लेषण चाहती है। वास्तविक स्थलों पर ही जाकर पवन वेग मापन करना होता है। यह भी संभव है कि किसी स्थल विशेष पर वांछित आंकड़े तत्काल उपलब्ध न हों। इस प्रकार के मामलों में, पवन संबंधी आंकड़े प्राप्त करने के लिए अन्य संभावनाओं को भी ध्यान में रखना होगा। इसका सबसे अच्छा उपाय पवन वेग को मापने के लिए विभिन्न ऊंचाइयों पर कप वायुगति मापक (कप एनिमोमीटर) लगाना है। इन पर ठीक मापचिह्न अंशांकन किया जाना चाहिए (चित्र-26)। इनके आंकडों को नियमित रूप से एक वर्ष तक एकत्र करना होगा। ये आधारभूत आंकड़े एक निश्चित ऊंचाई पर किसी भी स्थल विशेष पर पवन वेग परिवर्तनों को सुनिश्चित करने तथा परियोजना की संभाव्यता के निर्धारण में सहायक होंगे।

पवन संयंत्र लगाने के लिए सर्वोत्तम स्थल (चित्र-27) एक गोल पहाड़ी का सपाट शीर्ष स्थल ही है, जिसमें हल्की सी ढाल हो। किसी झील या सागर स्थित द्वीप सामान्यतया इस कार्य हेतु आदर्श स्थल होते हैं। खुले मैदान, खुली तटरेखा व
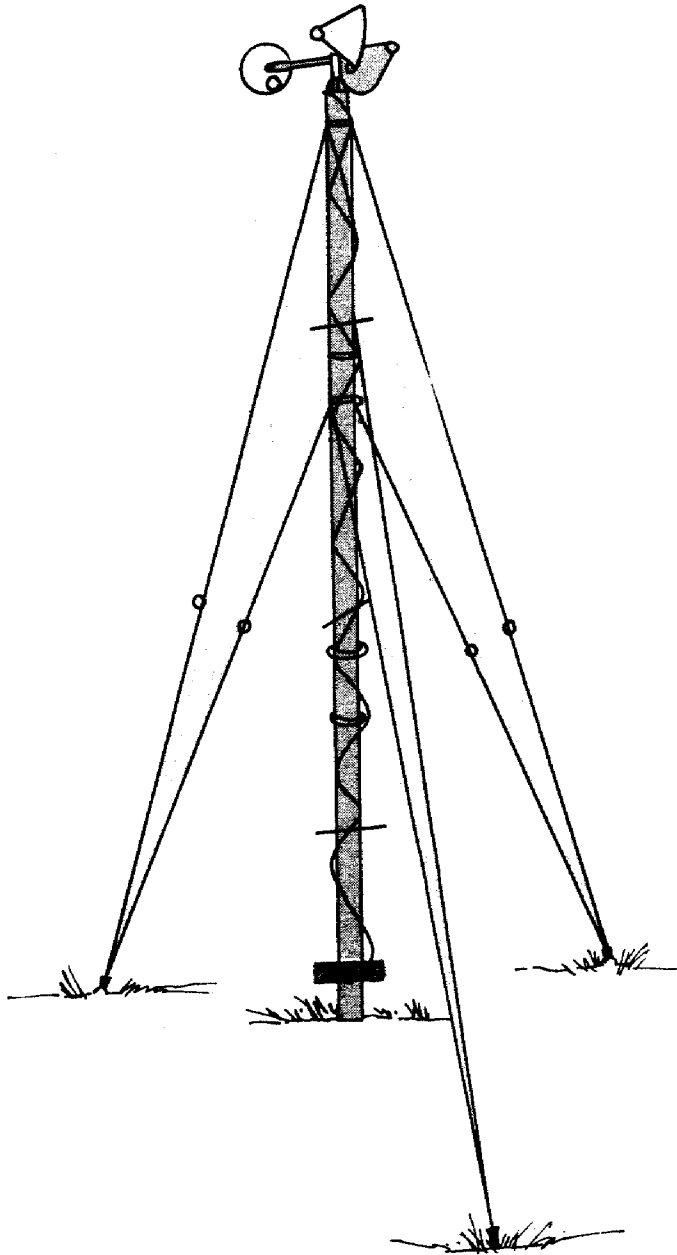
चित्र 26. कप वायुगति-मापक।

पर्वत शृंखलाओं के मध्य का अंतराल (जो वायु के फनलन (विंड फनेलिंग) का कारण बनता है) अच्छे स्थान माने जाते हैं। इनमें से कुछ स्थितियां चित्र-28 में दर्शाई गयी हैं।
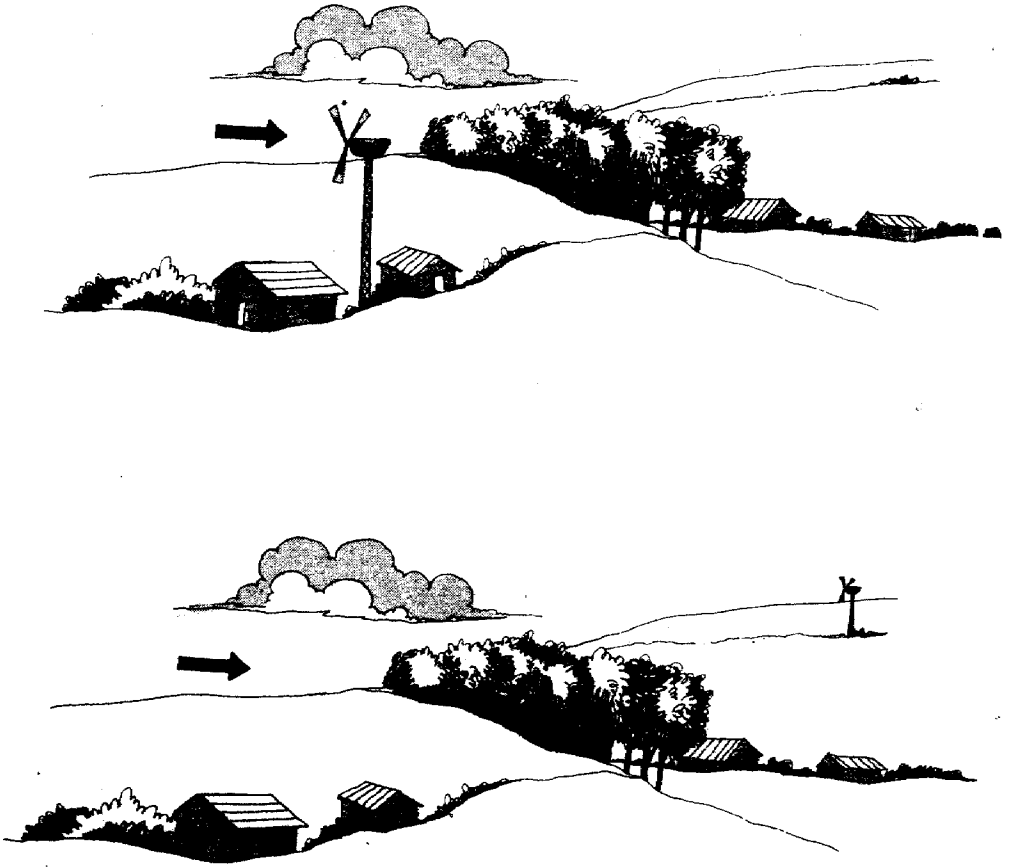
चित्र 27. पवन चक्की द्वारा संसाधन के रूप में वायु का उपयोग करने के लिए (ऊपर) एक अनुपयुक्त स्थल तथा (नीचे) एक उपयुक्त स्थल।

अच्छे पवन स्थलों के पारिस्थितिकीय चिह्न इस प्रकार हैं : (1) वृक्षों की झुकी हुई पंक्तियां, जिनमें शाखाएं वायु को नीचे की ओर प्रवाहित करती हैं जैसा कि सामान्य रूप से तटरेखा के निकटवर्ती क्षेत्रों में देखा जाता है, जहां पर तट की ओर पवन का प्रवाह होता है; (2) वृक्षौं का क्षेपण : इस स्थिति में वृक्षों का मुख्य तना स्थायी रूप से वायुदिशा के अनुरूप नीचे को झुक जाता है; (3) वायु द्वारा कर्तनः इसमें असामान्य रूप से एक ही ऊंचाई के छोटे-छोटे वृक्ष हो जाते हैं; (4) वृक्षों अथवा झाड़ियों का जाल, जिसमें वनस्पति किसी भी दशा में नीची झबरीली झाड़ियां से अधिक नहीं बढ़ पाती। पर्वतीय तटीय भू-प्रदेश पवन ऊर्जा उत्पादन हेतु आदर्श स्थल प्रस्तुत करते हैं।
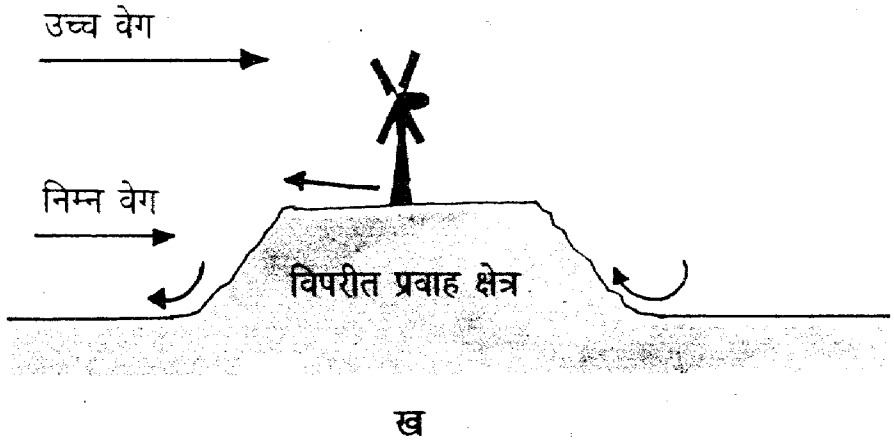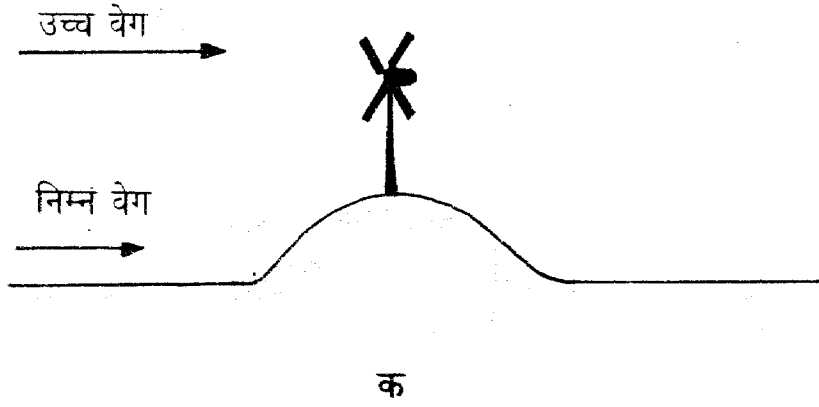
चित्र 28. पवन ऊर्जा यंत्रों की स्थिति को प्रभावित करने वाले कारक : (क) ठीक गोल पहाड़ी या कूटक एक उपयुक्त स्थल है; (ख) खड़ी ढालों वाली पहाड़ी या कटक एक अनुपयुक्त स्थल है।

पवन का अर्थशास्त्र

खाड़ी युद्ध के दौरान तेल के बढ़ते मूल्यों ने अनेक देशों, विशेष रूप से विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था पर बड़ा ही प्रतिकूल प्रभाव डाला था। इस ऊर्जा दृश्यावली में एक असाधारण बात यह ध्यान में आयी कि जब परम्परागत ऊर्जा की लागत में वृद्धि हो रही थी, उस समय पवन ऊर्जा की लागत में कमी आ रही थी। पवन ऊर्जा निश्चित रूप से लागत-प्रभावी है। इसके अतिरिक्त, पवन ऊर्जा के अन्य लाभों में जीवाश्मीय

ईंधनों पर कम निर्भरता, पर्यावरण का कम दोहन, तथा अधिक उपलब्धता के कारण ऊर्जा नियोजन में अधिक लचीलापन आदि भी शामिल हैं।

पवन ऊर्जा संयंत्र उन स्थानों पर विशेष रूप से प्रभावी हैं जहां पर वांछित वार्षिक औसत वायु वेग सुगमता से उपलब्ध है, तथा ऊर्जा के अन्य स्रोतों की लागत अधिक
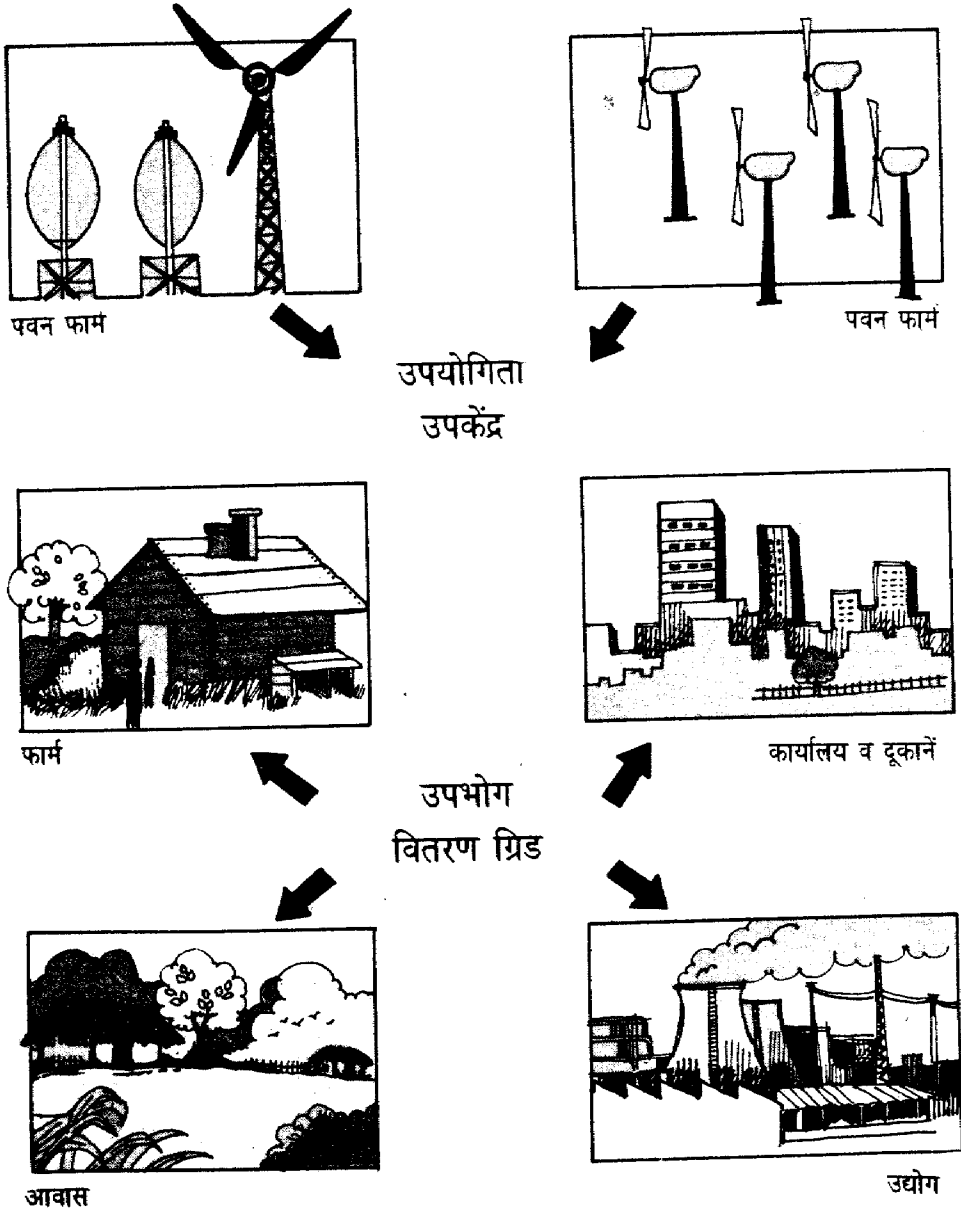
चित्र 29. पवन ऊर्जा के उपयोग।

है, यथा उन सुदूर स्थानों में जहां पर यांत्रिक या विद्युत शक्ति की आवश्यकता है या जहां कोई अन्य ऊर्जा स्रोत लागत-प्रभावी नहीं है।

संयंत्र की लागत उसके प्रकार, क्षमता तथा उपयोग के अनुसार ही परिवर्तनीय होगी (चित्र-29)।

अनुभवों से यह प्रमाणित हो चुका है कि इन परियोजनाओं में निवेशित पूंजी की वापसी अन्य ऊर्जा संयंत्रों की तुलना में फौरन ही होने लगती है।

आज का पवन ऊर्जा संयंत्र आर्थिक रूप से अपेक्षाकृत कम लागत वाला, ऊर्जा का सर्वाधिक विश्वसनीय स्रोत है, बशर्ते की उसे उसके उचित स्थान पर लगाया गया हो। पवन फार्मों की अवधारणा अब विकासशील देशों में भी लोकप्रियता प्राप्त करने लगी है।

पवन फार्मों के लिए अधिक स्थान की आवश्यकता नहीं होती । पवन संयंत्र अपतटीय क्षेत्रों तक में लगाये जा सकते हैं। अपटतीय क्षेत्रों का विशेष लाभ वहां तट-स्थित मशीनों की अपेक्षा उच्च गति की वायु का सतत प्रवाह है। इसका तात्पर्य यह है कि अपटतीय क्षेत्रों में, तटीय क्षेत्रों जितनी मात्रा में, ऊर्जा उत्पादन करने हेतु तट-स्थित संयंत्रों की अपेक्षा कम संयंत्र लगाने पड़ेंगे।

तथापि, अपटतीय संयंत्रों को स्थापित करने में कुछेक सीमाएं भी हैं, यथा जलीय नींव या आधार का निर्माण, सहायक निर्माण, आपूर्ति केबिल, जो मुख्य भूमि तक फैले होंगे तथा उच्च रखरखाव लागत। इससे किसी को भी इंकार नहीं होगा कि इस प्रकार के संयंत्र व उनका आधार इतना मजबूत अवश्य हो जो कि सागर की अत्यंत विकट परिस्थितियों को झेल सके। फिर भी, ये सब अलाभकारी स्थितियां, लाभकारी स्थितियों की तुलना में कहीं कम हैं। यदि दीर्घ-कालीन आर्थिक मुद्दों को ध्यान में रखा जाए, तो ये वास्तव में निश्चित रूप से लाभदायक ही सिद्ध होंगे।

विकसित देशों में इस दिशा में सतत विशिष्ट शोध कार्य चल रहे हैं। निकट भविष्य में तुलनात्मक विश्लेषण का परिणाम सामने आने ही वाला है।

6

भावी विकास

पवन चक्की उद्योग पूर्ण दक्षता की ओर बढ़ रहा है। इसका प्रमुख कारण सतत शोध तथा संगठित प्रयास, पुनर्नवीकृत किये जाने वाले ऊर्जा संसाधनों के प्रति बढ़ती जागरूकता, तथा विकसित देशों में सरकारों के सहयोग से होने वाले समन्वित परीक्षण हैं। पवन यंत्र गतिकी शोध पूरे तौर से पवन ऊर्जा के रूपांतरण तंत्रों को उन्नत करने की दिशा में कार्यरत हैं, व पवन तथा पवन यंत्रों के मध्य अंतःक्रिया की आधारभूत भौतिकी के अध्ययन पर केंद्रित हैं ताकि कम लागत में अधिक से अधिक ऊर्जा प्राप्त की जा सके। पुर्जों तथा यंत्रों पर जो उच्च शोध हो रहे हैं उनके द्वारा मुख्यतः सही पुर्जों तथा प्रणाली डिजाइन को इस प्रकार संशोधित करने की दिशा में सतत प्रयास किया जा रहा है ताकि ऐसे घटकों का पता लगाया जाये, उन्हें निर्मित किया जाये और उन्हें सटीक रूप से इस प्रकार समायोजित किया जाये, जिससे अंततः लागत में कमी तथा दक्षता में वृद्धि सुनिश्चित हो। भावी विकास में निश्चित रूप से इस दिशा में प्रयत्न किये जायेंगे कि परम्परागत ऊर्जा संसाधनों की तुलना में पवन ऊर्जा को अधिक व्यवहार्य बनाने पर बल दिया जाये। नये यांत्रिक अथवा वैद्युत और/या पवनगतिक नियंत्रण तंत्र विकसित हो रहे हैं, जिनसे पवन यंत्रों की श्रांति को कम करके उनकी संपूर्ण कार्यक्षमता में सुधार होगा। पवन टर्बाइनों में स्व-समकालिक नियंत्रक (आटोसिंक्रोनस कंट्रोलर) का प्रयोग इस दिशा में नवीनतम उपलब्धि है।

फलकों (ब्लेडों) में सुधार पर भी शोध कार्य किया जा रहा है। इस दिशा में भी नये एरोफायल डिजाइनों का विकास किया जा रहा है। इनसे अधिक शक्ति का उत्पादन होगा, श्रांति घटेगी और ऊर्जा नियंत्रण में सुधार होगा। समय की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए पवन ऊर्जा को रूपांतरित करने के लिए विभिन्न गति के जेनरेटरों के साथ उन्नत एरोफायल प्रणालियां तथा नियंत्रण तंत्रों को एक साथ समेकित करके उन्नत डिजाइन तैयार किए जा रहे हैं ताकि समय की मांग को पूरा किया जा सके।

पवन से विद्युत उत्पन्न करने के गैर-परम्परागत विचार भी अब जन्म लेने लगे हैं। टोरनाडो टावर इसी प्रकार का एक नव प्रवर्तन है। यह एक झिरीदार खड़ी बेलनाकार आकृति है, जिसके ऊपरी सिरे पर एक ऊर्ध्व समंजित टर्बाइन है, जिसके साथ एच.ए.डब्ल्यू.टी. फलकों के सिरे पर छोटे-छोटे एरोफायल सैक्शन लगे होते हैं। पवन द्वारा उत्पन्न कर्षण बलों के उपयोग से पवन ऊर्जा प्राप्त करने की अन्य संकल्पनाएं भी प्रकाश में आ रही हैं। विद्युत क्षेत्र में व्याप्त आवेशित कणों से भी ऊर्जा प्राप्त करने हेतु वैद्युत द्रव गतिक वायु-चालित जेनरेटर विकसित किये जा रहे हैं। इस प्रकार के दोलन तंत्रों के विकास की सैद्धांतिक संकल्पनाएं प्रस्तावित की जा रही हैं जो दोलायमान केबिल तारों से उत्पन्न गतिज ऊर्जा को वांछित प्रकार की ऊर्जा में परिवर्तित कर देंगी। आर्द्र वायु युक्ति एक अन्य नया विचार है, जिसमें वायु का प्रयोग कार्यकारी द्रव के रूप में किया जाता है। इन संकल्पनाओं को और अधिक विकसित करके व्यवहार्य रूप में लाने हेतु अभी काफी समय की आवश्यकता है।

डेनमार्क की सरकार ने पवन ऊर्जा के विकास के लिए एक बहुत बड़ा कार्यक्रम प्रारंभ किया है। इसी प्रकार की गतिविधियां संयुक्त राज्य अमेरिका सहित अनेकों यूरोपीय देशों में भी चल रही हैं। वर्तमान में लगभग समस्त औद्योगिक देशों में आधुनिक पवन चक्कियां हैं तथा वे नये डिजाइनों के विकास हेतु निरंतर प्रयत्नशील हैं। पवन टर्बाइनों के व्यापारिक स्तर पर निर्माण व विक्रय में डेनमार्क अग्रणी देश है। संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यू.एन.डी.पी.) भी पवन ऊर्जा को परिवर्तित करने वाली मशीनों के डिजाइन में सुधार, उनके निर्माण तथा परिचालन के लिए शोध-कार्यों में लगे विकासशील देशों को इस दिशा में सहायता देकर महत्वपूर्ण योगदान प्रदान कर रहा है।

परिवर्तन की यह हवा सारे विश्व में बह रही है। कई देशों में तो, पवन शक्ति विशेष रूप से कृषि कार्यों में यांत्रिक ऊर्जा का एक स्रोत बन गयी है। आजकल पवन टर्बाइन उद्योग किलोवाट्स से मेगावाट्स में पहुंच रहा है। पवन चालित टर्बाइनें आकार व उत्पादन-क्षमता की दृष्टि से विशाल होती जा रही हैं। सन् 1980 की 30 से 35 किलोवाट क्षमता वाली टर्बाइनें, 1990 में क्षमता में बढ़कर 3.2 मेगावाट तक की हो गयी हैं। पवन प्रौद्योगिकी लाभदायक है, और संपूर्ण विश्व में छोटे या बड़े पैमाने पर उत्पादन के लिए एक अत्यंत प्रभावशाली विकल्प है। पवन मशीनें विश्व के प्रत्येक कोने में, यहां तक कि दक्षिणी ध्रुव प्रदेश में भी लगाई और देखी जा सकती हैं।

विकासशील देश स्वयं भी अपने पवन संसाधनों का विकास करके आयातित कच्चे तेल पर अपनी निर्भरता कम कर सकते हैं। भारत में, 1985-86 (सातवीं पंचवर्षीय

योजना के प्रथम वर्ष में) की अवधि में पवन ऊर्जा कार्यक्रम को महत्वपूर्ण विस्तार प्रदान किया गया। इस कार्यक्रम में पवन संसाधन का आकलन, शोध तथा विकास एवं उन प्रौद्योगिकियों का प्रदर्शन जिनका भविष्य में उत्साहजनक रूप से जल की पम्पिंग, बैट्री चार्जिंग तथा विद्युत उत्पादन आदि वाणिज्यिक क्षेत्रों में सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा सकता है, शामिल हैं। पवन अनुवीक्षण तथा पवन द्वारा विद्युत उत्पादन की दिशा में कई नये प्रयास प्रारंभ किये गये हैं। वर्तमान डिजाइनों तथा उनके संशोधनों में अधिक सुधार के उद्देश्य से शोध एवं विकास किए जा रहे हैं। प्रायोगिक पवन फार्म स्थापित किए जा रहे हैं, और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से उनका अनुवीक्षण भी किया जा रहा है। वर्तमान में कुल मिलाकर 43 मेगावाट पवन ऊर्जा क्षमता प्राप्त की जा चुकी है, जिसमें 6.5 मेगावाट क्षमता निजी क्षेत्र में है। मोटे अनुमान के अनुसार देश में पवन ऊर्जा की संभाव्य क्षमता लगभग 20,000 मेगावाट है।

आठवीं पंचवर्षीय योजना में 100 मेगावाट अतिरिक्त क्षमता की स्थापना का प्रस्ताव है, जिसमें निजी क्षेत्र की परियोजनाएं भी सम्मिलित हैं। तमिलनाडु, गुजरात, कनार्टक, तथा आंध्रप्रदेश आदि की बढ़ावा देने वाली नीतियों के परिणामस्वरूप पवन ऊर्जा कार्यक्रम के क्षेत्र में निजी क्षेत्र की कंपनियों को निश्चित रूप से प्रोत्साहन मिलेगा। स्वदेश में निर्मित विद्युत उत्पादन करने वाले जेनरेटरों के विकास पर विशेष बल दिया जायेगा। वर्तमान में गहरे पवन पम्पों को लगाने की स्थिति का ब्योरा नीचे की तालिका में दिया जा रहा है।

राज्य	*स्थापित क्षमता*	*स्थापनाधीन*
आंध्रप्रदेश	10	–
गुजरात	–	40
कर्नाटक	17	3
केरल	15	5
मध्यप्रदेश	4	16
महाराष्ट्र	23	7
राजस्थान	19	1
तमिलनाडु	59	1
उत्तरप्रदेश	4	16
कुल	151	89

आज भारतीय पवन चालित मशीनें अपना योगदान कर रही हैं, लेकिन शोध-संबंधी सुविधाओं के अभाव में हम उन विकसित देशों से पिछड़ रहे हैं जिनके पास अद्यतन जानकारी उपलब्ध है, और जो लगातार एक के बाद एक नवीकरणीय प्रौद्योगिकियों के सतत विकास में लगे हुए हैं। अद्यतन पवन मशीनों की लागत-प्रभाविता की तुलना परम्परागत ऊर्जा उत्पादन से करने पर वह लगभग समान पाई गयी है। हमें केवल करना यह है कि ज्यादा बड़े पैमाने पर पवन ऊर्जा के दोहन हेतु सतत प्रयास करते रहें।

पवन ऊर्जा एक साफ सुथरी, कभी खत्म न होने वाली, किफायती, प्रचुरता एवं सरलता से उपलब्ध ऊर्जा का स्रोत है। वह दिन ज्यादा दूर नहीं है जब पवन ऊर्जा को ऊर्जा के एक परम्परागत स्रोत के रूप में माना जाने लगेगा।

7

पवन ऊर्जा संबंधी तथ्य

- ई. 644 में ही फारस (ईरान) में आदिकालीन पवन चक्कियों का प्रयोग किया जा रहा था।
- दक्षिणी ध्रुव में ऊर्जा प्राप्त करने के लिए पवन चालित यंत्र 1930 के दशक से पूर्व ही कार्यरत थे।
- भारत में सिंचाई परियोजनाओं में पवन चक्कियों के प्रयोग की संभाव्यता के आधिकारिक आकलन पहले-पहल सन् 1879 में किये गये। पवन संपूर्ण भारत में, विशेष रूप से लंबे तटीय क्षेत्र में निशुल्क उपलब्ध है।
- पवन चालित टर्बाइनों से विद्युत ठीक उसी प्रकार उत्पन्न होती है, जिस प्रकार साइकिल के डायनमों से उत्पन्न होती है। पवन उन फलकों को घुमाती है जो एक चालन यंत्रावली से गियर-बाक्स के माध्यम से जेनरेटर से जुड़े होते हैं।
- आंकड़ों से ज्ञात होता है कि संयुक्त राज्य अमेरिका में पवन द्वारा हर एक घंटे में 2×10^{12} किलोवाट तक विद्युत उत्पादन किया जा सकता है, जो कि संपूर्ण देश की कुल ऊर्जा मांग के बराबर है।
- संपूर्ण विश्व में लगभग 30 पवन चक्की निर्माताओं ने 1982-1990 के दौरान 20,000 ग्रिड से जुड़े जेनरेटरों की आपूर्ति की थी। केवल 1989 में ही पवन चालित टर्बाइनों ने हर एक घंटे में 2,000 मेगावाट से अधिक विद्युत का उत्पादन किया, जिससे लगभग 35 लाख बैरल तेल की खपत में बचत हुई।
- अमेरिका के वैज्ञानिकों का अनुमान है कि सन् 2005 तक पवन चालित टर्बाइनों से 320 अरब किलोवाट प्रति घंटा विद्युत प्राप्त हो सकेगी, जो कि 10 करोड़ व्यक्तियों की एक वर्ष की समस्त आवासीय विद्युत आवश्यकताओं को पूरा कर सकेगी।
- विश्व की सबसे बड़ी व सबसे उन्नत पवन टर्बाइन बोइंग इंजीनियरिंग कंपनी द्वारा निर्मित 3.2 मेगावाट क्षमता वाली एम.ओ.डी. 5-बी है। इसके रोटर का व्यास 97.5 मीटर है।

शब्दावली

एरोडायनेमिक ब्रेक (वायु गतिक ब्रेक) : वह रोक प्रणाली जो कि वायु गतिक बल का प्रयोग करती हो। उदारहण के लिए, एक ऐसी रोक प्रणाली जो केंद्रापसारी बल को प्रयोग करते हुए काम करती हो तथा पवन के बल द्वारा चालित होती हो।

एरोडायनेमिक्स (वायु गतिकी) : वायु और अन्य गैसीय द्रवों की गति तथा गतिशील पिंडों पर ऐसे द्रवों के सापेक्ष लगने वाले बलों का अध्ययन।

एरोफायल : पवन चालित यंत्रों के फलकों की ज्यामितीय आकृति जो उनके ऊपर से वायु के प्रवाहित होने पर 'उठान' (लिफ्ट) उत्पन्न करती है।

कंट्रोल पैनल (नियंत्रणपट्ट) : टर्बाइन के समस्त महत्वपूर्ण क्रांतिक (क्रिटिकल) कार्यों को नियंत्रित व मानीटर करता है।

कपलिंग (युग्मन) : उच्च गति वाला प्रोपेलर शैफ्ट गियर शैफ्ट से जुड़ा रहता है, जो एक लचीले युग्मन या कपलिंग द्वारा जेनरेटर से जुड़ा रहता है। यह दंडों के बीच उत्पन्न होने वाले अक्षीय त्रिज्यक तथा कोणीय विस्थापनों को अवशोषित कर लेता है, अर्थात् अपने में ही रोक लेता है। उच्च गति वाले दंड में कपलिंग का प्रयोग लगातार परिवर्तित होती पवन की गति के परिणामस्वरूप ऊर्जा के उतार-चढ़ाव को कम करता है।

कायनेटिक एनर्जी (गतिक ऊर्जा) : गति द्वारा उत्पन्न ऊर्जा, यथा वायु प्रवाह में विद्यमान ऊर्जा।

गियर-बक्स : शक्ति का स्थानांतरण गियर-बक्स से जेनरेटर या मशीन तक किया जाता है।

जेनरेटर (जनित्र) : अधिकांश पवन टर्बाइनों में, पवन ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित करने के लिए दो जनित्र (ए.सी. या डी.सी.) लगे होते हैं—एक कम पवन गति के लिए तथा दूसरा तीव्र पवन गति के लिए।

टावर (मीनार) : पवन मशीन को भूमि के निकट की कम गति की वायु से बचाने के लिए, जिसमे अधिकं विक्षोभ होता है, तथा सीधी हवा की तरंगें प्राप्त कराने के लिए मीनार अथवा इसी प्रकार की ऊंची अन्य सहायक संरचना आवश्यक है। यह मीनार सामान्यतया लोहे के खंभों की होती है या गाइ-तारों से बंधे स्तभों की बनी होती है।

ड्राइव ट्रेन (चालन शृंखला) : इसमें एक घूर्णन दंड (रोटोटिंग शैफ्ट) और एक गियर-बक्स होता है जो शक्ति को कम गति वाले रोटर से उच्च गति वाले जेनरेटर अथवा अन्य युक्तियों में स्थानांतरित करता है।

डिस्क ब्रेक : मुख्य दंड पर लगे हुए यांत्रिक ब्रेक जो गियर-बक्स पर भार के कंम से कम प्रभाव को सुनिश्चित करते हैं।

नासेल : एक ऐसा पर्दा होता है, जो कि मुख्य ढांचे या इससे संबद्ध घटकों की रक्षा करता है।

प्रोपेलर शैफ्ट (नोदक शैफ्ट) : रोटर में फलक, हब और नोदक शैफ्ट होते हैं। यह यंत्र-समूह पवन की गतिक ऊर्जा को घूर्णन दंड ऊर्जा (रोटेशनल शैफ्ट एनर्जी) में परिवर्तित करती है।

फाउंडेशन (नींव) : नींव का चयन शैलों और मृदा के प्रकारों पर निर्भर होता है। स्थानीय परिस्थितियों व आवश्यकतानुसार नींव की वास्तविक विशिष्टताएं निर्धारित की जाती हैं। पवन चक्कियों को आवश्यकतानुसार गहरे सागर या अपतटीय छिछले जल में भी लगाया जा सकता है।

ब्लेड (फलक) : घूर्णक (रोटर) पर लगे फलक पवन ऊर्जा को घूर्णन दंड ऊर्जा (रोटेशनल शैफ्ट एनर्जी) में परिवर्तित करते हैं। ये सामान्यतया लकड़ी, फाइबरग्लास तथा धातु से निर्मित होते हैं। इनका प्रकार, आकार तथा संख्या मॉडल के अनुसार परिवर्तित होती है। साधारणतया एक प्रारूपिक क्षैतिज अक्ष वाली (उच्च गति वाले) पवन यंत्र में दो या तीन एरोफायल प्रकार के फलक होते हैं। क्षैतिज अक्ष वाले (कम गति वाले) पवन यंत्र में सामान्तया कई फलक होते है। इन पर या तो सपाट या मुड़ी हुई धातु की पट्टियां लगी होती हैं या मस्तूल पर पाल लगे होते हैं।

बेल्ट ड्राइव (पट्टा चालन) : इसमें एक 'वी' आकार की बेल्ट तथा पुलीड्राइव होते हैं। यह प्रोपेलर शाफ्ट से शक्ति को कुछ छोटे जेनरेटरों में प्रसारित करने में सहायता प्रदान करती है।

माइक्रोप्रोसेसर (सूक्ष्म संसाधिन) : विभिन्न मानीटर कार्यो को संपन्न करने के लिए

पवन यंत्र के माडलों में सूक्ष्म संसाधिनों का प्रयोग किया जाता है। पवन मशीन के सभी भाग एक दूसरे से भली प्रकार संबद्ध रहते हैं तथा उन सबके कार्यों का विधिवत नियंत्रण केंद्रीय माइक्रोप्रोसेसर द्वारा किया जाता है।

मेन फ्रेम (मुख्य ढांचा) : पवन यंत्र का मुख्य ढांचा अथवा विभिन्न घटक, यथा मुख्य दंड, संचारण यंत्रसमूह (ट्रांसमिशन मैकेनिज्म) जेनरेटर आदि इसी पर लगाए जाते हैं।

मेन शैफ्ट (मुख्य दंड) : मुख्य दंड गियर-बक्स के साथ संबद्ध होता है

मैकेनिकल ब्रेक (यांत्रिक ब्रेक) : चकती रोक, ड्रम रोक या पट्टिका रोक जो कि लगाए गए स्प्रिंग, भार या द्रवचालित तंत्र द्वारा सक्रिय होती है।

यॉ (पार्श्ववर्तन) : पवन की दिशा समय-समय पर परिवर्तित होती रहती है। पवन की गति के साथ-साथ तालमेल बिठाये रखना कठिन एवं समय लेने वाला कार्य है। क्षैतिज अक्षीय पवन मशीनों का पवन की दिशा में समंजित होना आवश्यक होता है, और इस प्रक्रिया को पार्श्ववर्तन (यॉइंग) कहते हैं। पार्श्ववर्तन प्रणाली पवन चक्की को स्वयंमेव पवन की दिशा में समंजित कर देती है। ऊर्ध्व अक्षीय (वर्टिकल एक्सिस) पवन यंत्र किसी भी दिशा से पवन को स्वीकार कर सकते हैं। अतः इन्हें यॉ-नियंत्रण की आवश्यकता नहीं होती है।

रोटर (घूर्णक) : एक यंत्र-समूह जिसमें कुछ घूमने वाले पुर्जे होते हैं—फलक, हब तथा एक दंड। यह यंत्र-समूह वायु की गतिक ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित करता है।

लैटिस टावर (जालक मीनार) : यह मीनार वर्गाकार खंडों से बनाई जाती है। इसके निर्माण में स्फारणों (फलैंज) और बंधकों (लेसिंग) का उपयोग किया जाता है ताकि पवन-चक्की के चलने के प्रारंभ या उसके वास्तविक चालन के समय अनुनाद (रिजोनैंस) की समस्या से बचा जा सके।

विंड वेन (वात दिग्दर्शी) : यह वायु दिशा संवेदक नासेल के ऊपर लगा होता है तथा केंद्रीय नियंत्रण कंप्यूटर के लिए वांछित निवेश उपलब्ध कराता है। यह व्यवस्था पवन टर्बाइन को पवन की दिशा के अनुरूप रखती है।

स्क्रीन (आच्छादन) : फाइबर ग्लास का एक ढक्कन जो यंत्र के पुर्जों को पर्यावरणीय प्रभावों से बचाता है तथा शोर को कम करता है।

सेफ्टी मैकेनिज्म (सुरक्षा यांत्रिकी) : पवन संयंत्रों को उनकी निर्धारित भार सीमा तथा घूर्णन गति सीमा में बनाये रखने तथा आवश्यकतानुसार बंद करने के लिए नियंत्रण तंत्रों की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए कुछ पवन चक्कियों

में दो प्रकार की रोक व्यवस्था होती है। एक यांत्रिक व्यवस्था, जिसमें गोल प्लेटें प्रयोग की जाती हैं, तथा दूसरी वायु गतिक। वायु गतिक प्रणाली में गति सीमा को पार करते ही हरेक फलक की नोक केंद्रापसारी बल द्वारा सक्रिय होकर घूम जाती है अथवा उसी बल द्वारा सक्रिय होने से फलकों के अनेक फ्लैप बाहर मुड़ जाते हैं। इस प्रकार पवन चक्की को अतिभार से बचाया जाता है।

हब (नाभि) : फलक नाभि में लगे होते हैं, जो बियरिंग पर आधारित मुख्य शैफ्ट पर होती है।

हाइड्रालिक यूनिट (द्रवचालित इकाई) : यह ऊर्जा के भंडार के रूप में कार्य करती है। इसमें तेल को संग्राहक (एक्यूमुलेटर) में भर दिया जाता है और यह तेल ब्रेक प्रक्रिया (ब्रेकिंग प्रौसेस) के लिए उपलब्ध रहता है। यह व्यवस्था बिजली न होने पर कार्य करती है।

मैसर्स श्रीराम ग्राफिक्स, जनकपुरी, नई दिल्ली द्वारा लेजर कंपोज तथा मैसर्स दी सैंट्रल इलैक्ट्रिक प्रैस, नारायणा, दिल्ली द्वारा मुद्रित।